अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

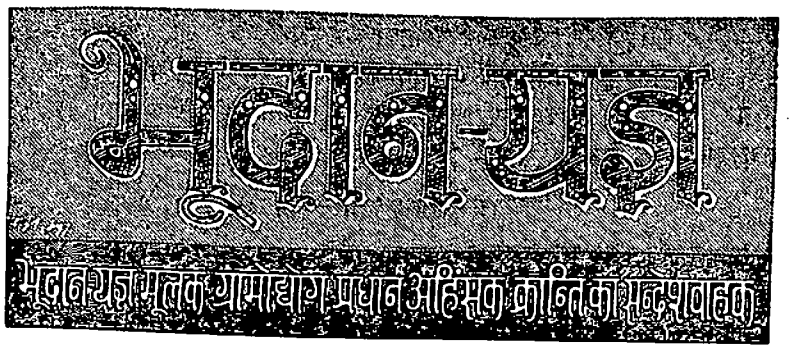

वार्षिक मूल्य ६) ✠ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार ✠ एक प्रति २ आना

वर्ष–३, अंक–१२ ✠ राजघाट, काशी ✠ शुक्रवार, २१ दिसंबर, '५६

हृदय खुला रखो

हमें और हमारे साथियों को मुख्य काम हृदय खोलने का करना चाहिए। यह विचार इतना समर्थ है कि हृदय खोलने पर वह स्वयमेव अन्दर जायेगा। जैसे हमने फेफड़ा खुला रखा हो, तो यह सारी हवा स्वयमेव नाक से अन्दर चली जाती है। उसके लिए कोई परिश्रम नहीं करना पड़ता है। कोई चौबीस घंटे भी चलने की सोचेगा, तो भी उसकी थकान आती है, परंतु साँस लेने में कभी भी थकान नहीं आती है। हमारा कान सुनता है, तो क्या उसको कोई थकान मालूम होती है? मन खोल रखा हो, तो कान से सुनने पर वह चीज अन्दर जायेगी और वह चीज ऐसी है कि मन को प्रिय लगेगी। भूदान-यज्ञ का विचार इतना मीठा है कि दिल खुला रखो, तो वह स्वयमेव अन्दर जायेगा।

—विनोबा

विश्वशांति का साधन : भूदान

(विनोबा)

सारी दुनिया में आज मानव-समाज में जहाँ तहाँ कुछ-न-कुछ खलबली ही चल रही है। पुराने जमाने में ऐसा कम था, क्योंकि मानव-समाज भिन्न-भिन्न देशों में और प्रांतों में बँटा हुआ था। वे लोग एक-दूसरे को जानते भी नहीं थे। यहाँ तक हालत थी कि १०-१२ मील दूरी पर के किसी गाँव के साथ जीवन भर में संबंध भी न आये। चीनी तत्त्वज्ञ लाओत्से ने अपनी कल्पना के आदर्श ग्राम का एक लक्षण यह बताया है कि उस गाँव के लोग अल्पसंतुष्ट थे और अपने में संतुष्ट थे। वे रात को शांति से और सुख से सो जाते थे। उनका बहुत-सा जीवन शांतिमय ही बीतता था। आस-पास के गाँवों के साथ, अड़ोस-पड़ोस के देशों के साथ और कुल दुनिया के साथ संबंध न रखते हुए शांति में रहना, आज लोग पसंद नहीं करेंगे। आज लोग ऐसी शांति नहीं चाहेंगे, जो दुनिया से कटी हुई हो।

शांति का अभावात्मक अर्थ

अपने देश में शांति चाहने वाले कुछ लोग कहते हैं कि किसीके साथ संबंध न आये, तो अच्छा है। पड़ोसी की अच्छाई का उत्तम वर्णन हम यही करते हैं कि वह पचास साल हमारे पड़ोस में रहा, परन्तु उसने हमसे कभी झगड़ा नहीं किया। याने झगड़ा नहीं किया, इसीमें मानवता की परिसमाप्ति हो गयी। परन्तु वह हम दोनों एक-दूसरे से अलग ही रहे, न उसने हमारे सुख-दुःख की चिन्ता की, न हमने उसके सुख-दुःख की चिन्ता की। उसने दूसरों को तकलीफ नहीं दी, हमारे घर पर पत्थर नहीं फेंके, इतना अभावात्मक काम कर लिया तो मानवता का समाधान हो जाता है।

यह जो शांति का अभावत्मक अर्थ है कि न किसीके साथ झगड़ा हो, न कोई संबंध भी हो, वह आज के मानव को मंजूर नहीं है। इसीलिए आज दुनिया भर में जो कशमकश चल रही है, यह हालत पुराने जमाने से गिरी हुई नहीं है, बल्कि अच्छी है। आपने देखा कि गत महीने में हंगेरी में और मिस्र में कुछ घटना घटी जिससे कुल दुनिया बेचैन हो गयी, यह भास हुआ कि क्या इसके परिणाम-स्वरूप बड़ा भारी महायुद्ध तो नहीं शुरू हो जायगा?

विज्ञान का विकास

पुराने जमाने में कौन जानता था कि हंगेरी कहाँ है और मिस्र कहाँ है। बल्कि देश के एक कोने का दूसरे कोने को भी पता नहीं था। सब प्रांतवाले एक-दूसरे के सहयोग से कोई बड़ा कार्य करें, यही कल्पना उस वक्त नहीं थी। इसमें उनका कोई दोष नहीं था, क्योंकि उस जमाने में विज्ञान का कोई विकास ही नहीं हुआ था। एक दूसरे के साथ संबंध रखने के लिए जो व्यापक साधन आज हमारे हाथ में आये हैं, वे उनके पास नहीं थे। आज चौबीस घंटे के अन्दर दुनिया की सब खबरें दुनिया भर में फैल जाती हैं और दो-तीन दिनों में मनुष्य दुनिया के इस हिस्से से, उस हिस्से में पहुँच जाता है। इसलिए आज के मानव का दर्शन व्यापक हो गया है और दुनिया के किसी एक कोने में कहीं गलत काम होता है तो सारी दुनिया की विवेक बुद्धि को क्लेश होता है और इसीलिए किसी भी छोटी-सी घटना के आधार पर महायुद्ध छिड़ जायेगा ऐसा डर रहता है।

क्रूर से व्यापक हिंसा की ओर

यह बहुत अच्छी और उन्नतिकारक अवस्था है। कहीं भी थोड़ा-सा दुःख हो, तो कुल दुनिया को उसका स्पर्श होता है और उस निमित्त से कुल दुनिया लड़ाई के लिए तैयार हो जाती है। हम इसे अच्छा समझते हैं। आज जो हिंसा होती है, वह बहुत बड़े पैमाने पर होती है। यह भी हमें अच्छा लगता है। पुराने जमाने में जो हिंसा होती थी, वह बहुत क्रूर हिंसा थी। एक मनुष्य हाथ में तलवार लेकर दूसरे का पेट चीरे, या गला काटे, यह बहुत भयानक हिंसा है। परंतु वह छोटी है और उसका स्पर्श दुनिया को नहीं होता है। अब ऐसी छोटी-छोटी हिंसाएँ कम होंगी और बड़ा विश्वयुद्ध होगा। उसमें ऊपर से बम गिरेंगे, तो नीचे हजारों लोग मारे जायेंगे। यह बहुत अच्छा है, उसमें लाभ है; क्योंकि उससे मानव-जाति के सामने हिंसा की बुराई स्पष्ट हो जाती है। जो मनुष्य हवाई जहाज में बैठ कर बम डालता है, वह नीचे के मनुष्यों की ओर देखता भी नहीं। वह तो बम इसलिए डालता है, क्योंकि लड़ने का तय किया गया है। उसकी मुद्रा पर क्रोध नहीं है, वह बिलकुल शांति से नीचे बम डालता है। अगर वह शान्ति से काम नहीं करेगा, तो अचूक स्थान पर बम नहीं डाल सकेगा। वह गलत स्थान पर गिरेगा और परिणाम नहीं आयेगा। इसलिए उसे शांति से समत्व-बुद्धि से काम करना पड़ेगा। उसके देश का हुक्म हुआ है, इसलिए वह बम डालता है। लेकिन जो आमने-सामने खड़े होकर एक-दूसरे के गले पर तलवार चलाते हैं, उनके अंदर द्वेष, क्रोध भरा हुआ रहता है। इसलिए उसका जानवर का-सा रूप दीखेगा। परंतु बम डालने वाले का रूप जानवर का-सा नहीं दिखेगा। उसका मनुष्य का ही रूप दिखेगा। यह तय हुआ है कि लड़ाई करनी है, इसलिए वह बम डालता है। अगर यह तय होगा कि लड़ाई नहीं करनी है, तो वह नहीं डालेगा। इसलिए आज जो भी होगा, बुद्धिपूर्वक और सोच-विचार से होगा, किसी बात का सारी दुनिया पर क्या असर होगा, यह खयाल रख कर और व्यापक बुद्धि से किया जायेगा।

बाणों द्वारा गुरु-पूजा

पुरानी लड़ाइयों में ऐसा नहीं था। जो राजा एक-दूसरे पर हमला करते थे, वे बड़े द्वेष और क्रोध के साथ करते थे। हाँ, अर्जुन जैसे का वर्णन महाभारत में बड़े गौरव के साथ किया है कि वह बिना किसी द्वेष के लड़ा था। अर्जुन और भीष्म-द्रोण आमने-सामने खड़े थे। सबके हाथ में धनुष थे। परन्तु यह भी बाण नहीं छोड़ रहा था और वे भी नहीं छोड़ रहे थे। अर्जुन देखता था कि मेरे सामने मेरे गुरु खड़े हैं और वे देखते थे कि हमारे सामने हमारा शिष्य खड़ा है। दोनों वैसे ही खड़े थे, तो फिर भगवान् ने अर्जुन से कहा कि 'अरे तू शिष्य है, तो यह पूजाकार्य तुझे ही आरंभ करना चाहिए।' फिर अर्जुन ने दो बाण गुरु द्रोणाचार्य के पाँव के निकट चरण-वंदना करने के लिए मारे–'गुरुपूजार्थम्'। जब गुरुपूजा हो गयी, तो गुरु ने बाण मारना शुरू किया और फिर लड़ाई शुरू हुई। इस तरह परस्पर प्रेम और आदर रखते हुए वे दोनों लड़े। लेकिन यह बहुत ही बड़े लोगों की बात है कि जो आमने-सामने खड़े रहते हुए भी मन में शांति रख कर लड़े। परंतु बाकी सब साधारण लोग तो क्रोध रख कर ही लड़ते थे। अगर क्रोध और द्वेष न हो, तो हाथ में तलवार लेकर दूसरों का गला काटना बनेगा कैसा? परंतु दूर से बम डालने के लिए क्रोध की क्या जरूरत है?

www.vinoba.in

मिस्र और हंगेरी का मामला

अभी लोग कहते हैं कि इंग्लैंड ने मिस्र पर हमला किया, यह बहुत बुरा काम हुआ। परंतु उधर ईडन कहता है कि 'धन्य हैं हम कि हमें ऐसी परोपकार बुद्धि सूझी। हमने लड़ाई रोकी, नहीं तो वहाँ बड़ा भारी संहार होता, भयानक आग लगी होती। दुनिया की शांति के लिए हमें यह करना पड़ा।' उधर हंगेरी के बारे में रूसवाले कहते हैं कि 'वहाँ के लोगों ने गलत काम किये, 'रिएक्शनरीज' (प्रतिक्रांतिवादियों) ने कुछ गड़बड़ की और वहाँ के लोगों ने एक अच्छे काम के लिए हमें बुलाया, इसलिए हम वहाँ गये और हमारे देश के जरिये एक बड़ा कार्य हुआ।' उधर दूसरे लोग कहते हैं कि उन्होंने बहुत गलत काम किया। ये सारे विचार के भेद हैं और इनके फलस्वरूप जो भी लड़ाई होगी, वह बहुत बड़ी होगी।

क्षेत्रीय प्रश्न समाप्त

आजकल कुछ लोग यह कोशिश करते हैं कि लड़ाई हो तो भी क्षेत्रीय हो, वह सारी दुनिया में न फैले, उसके परिणामस्वरूप विश्वयुद्ध न हो। हम इसमें कोई सार नहीं देखते, बल्कि विश्वयुद्ध का खतरा खड़ा हो, यही हमें अच्छा लगता है। क्योंकि उसके परिणामस्वरूप मानव हमेशा बड़े पैमाने पर सोचने का शिक्षण पायेगा, अगर गंभीर समस्या खड़ी हुई तो यह नहीं हो सकता है कि वह क्षेत्रीय हो, उसकी परिणति महायुद्ध में न हो। उसके कारण सारी दुनिया में क्षोभ पैदा होना लाजमी है। कुल दुनिया के लोग चाहेंगे कि हम उसमें कूद पड़ें। क्या बंगाल में जोरों से लड़ाई शुरू होगी और तमिलनाड को स्पर्श भी नहीं होगा? विज्ञान के जमाने में आपकी ये सीमाएँ टिकने वाली नहीं हैं। जहाँ विश्व के सवाल पैदा होंगे, वहाँ हम यह नहीं कह सकेंगे कि हम अपनी सीमा के अंदर ही सोचेंगे।

दिल और दिमाग का झगड़ा

आजकल तमिल भाषा का कोई भी अखबार खोल कर देखिये, तो आपको प्रथम पृष्ठ हिंदुस्तान के बाहर के समाचार से भरा हुआ दिखेगा। इसका कारण यह है कि आज दुनिया कुल मिला कर एक परिवार बनने जा रही है। जमाना चाहता है कि कुल दुनिया एक बने। लोगों की अभी उसके लिए तैयारी नहीं हुई है परंतु जमाने की यह मांग है कि हम व्यापक बनें। बुद्धि कह रही है कि यह विज्ञान का जमाना है। इसमें व्यापक बनोगे, तभी टिकोगे। परंतु पुराने साहित्य के संस्कारों से भरा हुआ दिल कहता है कि अपना छोटा-सा देश ठीक है। आज दुनिया में जितनी तकलीफें हो रही हैं, वे सब इस दिल और दिमाग के झगड़े के कारण हो रही हैं। दिल अभी संकुचित है और जमाने की माँग है कि व्यापक बनो। अपना दिल जमाने के अनुकूल बनाने में जितनी देरी लगेगी उतनी देर तक दुनिया में आपत्तियाँ रहेंगी और जब हम समझेंगे कि हम व्यापक बने हैं, तब वे सारी आपत्तियाँ खत्म हो जायेंगी।

हिंदुस्तान संसार से आगे

आज की दुनिया का यह एक बड़ा प्रश्न है। इसीलिए मैं हमेशा कहता हूँ कि हिंदुस्तान के लिए एक संदेश है। इस मामले में हिंदुस्तान सारी दुनिया से आगे है। यहाँ जितना व्यापक दिल है, उतना व्यापक दिल अभी दुनिया के दूसरे देशों में नहीं हुआ है। यहाँ पिछले साल प्रांत-रचना के झगड़े चले और काफी संकुचित बुद्धि प्रकट हुई, पर भिन्न-भिन्न प्रांतों ने यह मांग नहीं की कि हमारी भाषा का अलग राष्ट्र बने। उधर योरप में भाषा के आधार पर अलग छोटे-छोटे राष्ट्र बने हैं। लेकिन हिंदुस्तान में कोई भी प्रांत अलग राष्ट्र बनाने की माँग नहीं कर रहा है। यहाँ किसी की भी यह शिकायत नहीं है कि हम दिल्ली के मातहत हैं, बल्कि सब समझते हैं कि दिल्ली हमारी है, यह सारा देश हमारा है।

दानपत्र से विश्वशांति को वोट

इस मामले में भारत योरप से बहुत आगे बढ़ा हुआ है। भारत का राजनैतिक चिंतन योरप से बहुत आगे बढ़ा हुआ है। इसीलिए भारत पर बड़ी जिम्मेवारी है। दुनिया के लोग भारत से यह आशा रखते हैं कि भारत के लोग व्यापकता दिखायें, एकता का प्रदर्शन करें, भारत से दुनिया को शांति का संदेश मिले। देश-देश में जो बड़ी-बड़ी समस्याएँ हैं, वे शांति से हल हो सकती हैं, इसका शिक्षण भारत देश दुनिया को दे। भूदान का कार्य देखने के लिए योरप और अमेरिका से कितने ही लोग आते हैं। वे यहाँ हमारी यात्रा में साथ रह कर कुछ देखते हैं और फिर अपने देश में वापस जाने पर इस पर लिखते हैं। हिन्दुस्तान की भूमि-समस्या हल हो रही है, इसमें उन्हें क्या दिलचस्पी है? भूमि समस्या हल हो रही है, यह एक छोटी-सी बात है, परंतु हिन्दुस्तान का इतना बड़ा भूमि का प्रश्न शांति के तरीके से हल करने की सोची जा रही है, इसी का उन्हें आश्चर्य होता है और इससे बड़ी आशा मालूम होती है। जमीन प्रेम से माँगी जा रही है, प्रेम से दी जा रही है, ग्रामदान भी प्रेम से हो रहा है, यह क्या कीमिया है, यह वे देखने आते हैं। दूसरे देशों में भूमि-समस्या थी और है। कई देशों में इसका हल कत्ल से हुआ है। वह तरीका सारी दुनिया को परिचित है। कई देशों में कानूनी जबर्दस्ती से यह काम किया गया है। वह भी तरीका दुनिया को मालूम है। परंतु अब यह नया तरीका निकला है। इसमें सिर्फ भूमि का मसला हल नहीं होता है, बल्कि प्रेम बढ़ता है, देश की ताकत बढ़ती है, शांति की कुंजी हाथ में आती है। सारी दुनिया को उसकी बड़ी प्यास है। इसीलिए हमने कहा है कि जो शख्स भूदान-यज्ञ में दानपत्र देता है, वह विश्वशांति के लिए वोट देता है। और हमारा दावा है कि विश्वशांति के लिए अमली कार्य, भूदान के रूप में भारत में हो रहा है। यह एक अद्भुत वस्तु है।

भूदान से युद्ध-समाप्ति

विज्ञान के जमाने में जिस व्यापक दिल की जरूरत है, वह व्यापक दिल भूदान से बनेगा। जमाना जितना व्यापक दिल चाहता है, उतना व्यापक नहीं बन रहा है, इसीलिए युद्ध का खतरा दीख रहा है। दिल बड़ा बनेगा और जमाने के साथ होगा, तो कुल लड़ाइयाँ एक क्षण में खत्म होंगी। युद्ध ही खत्म हो जायेगा।

फिरका-दान, तालुका-दान दें

अब मैं ग्रामदान की तरफ नहीं देखता हूँ। मैं फिरकादान और तालुका-दान चाहता हूँ। कुल तालुके में जमीन सबकी हो, सब मिलजुल कर काम करें, प्रेम से बाँट कर खायें, तो दुनिया की ताकत बढ़ेगी। इसीलिए हमने यह कार्यक्रम रखा है। हम आशा करते हैं कि मदुरा जिले में इसकी शक्ति प्रकट होगी।

(पेरियकुलम्, मदुरा, ७-१२-५६) ——

युग का नया सबेरा

आँखें खोलो, होश सँभालो, कब का मिटा अंधेरा।
घर-घर तुम्हें जगाने आया युग का नया सबेरा॥
नयी उमंगें, नयी तरंगें, नूतन जीवन-धारा।
बीच धार में तुझसे मिलने आया स्वयं किनारा॥
आज तो तेरी इच्छाओं का भाग्य बना है चेरा॥ १॥
खग-कुल के कंठों में गूंजे जन-जागृति के नारे।
लता-विटप तेरे स्वागत में पुष्पांजली सँवारे॥
देख तो तेरे पथ पर किसने आकर स्वर्ण बिखेरा॥ २॥
आहों का तूफान लिये चल, बढ़ने का अरमान लिये चल।
साँस-साँस के तार-तार में क्रांती का आह्वान लिये चल॥
दौड़ चला चल, रुक न एक पल, कालपुरुष ने टेरा॥ ३॥
अभी बहुत मंजिल बाकी है, पैर न रुकने पावें।
तेरी निष्ठा से मारग के शूल फूल बन जावें॥
अंत न यह मंजिल का समझो, यह है रैन बसेरा॥ ४॥
सत्ता-सम्पति के सपनों से ऊब चुकी है दुनिया।
शोसन-शोषण के स्वारथ में डूब चुकी है दुनिया॥
सर्वोदय के ढंग से केवल पार लगेगा बेरा॥ ५॥
झाँक रहे श्रम की बूँदों में राम-राज्य के सपने।
त्याग-प्रेम से स्वर्ग सरीखे गाँव बनेंगे अपने॥
बदल रहा दुनिया का नक्शा युग का चतुर चितेरा॥६॥

—रामगोपाल दीक्षित

www.vinoba.in

क्रान्ति की अनोखी प्रक्रिया

(दादा धर्माधिकारी)

आप लोग दिल्ली के बहुत नजदीक रहते हैं। १९४७ के बाद से आपने दिल्ली में फर्क देखा होगा। सन् १९४७ से पहले नवाब, राजा अपनी मर्जी या तलवार से हुकूमत करते रहे। जो दिल्ली राजाओं की राजधानी थी, वही दिल्ली भारतवर्ष के लोकराज्य की 'लोकधानी' बन गयी है। आज दिल्ली के तख्त पर अपनी मर्जी से कोई नहीं बैठ सकता, तलवार से तख़्त पर कब्जा नहीं कर सकता और न उसे कोई खरीद ही सकता है। राजेन्द्रबाबू और जवाहरलालजी दिल्ली की कुर्सी पर बैठते हैं, लेकिन अपनी मर्जी से नहीं। इस देश के गरीब से गरीब नागरिक की इजाजत और अनुमति से बैठते हैं। उनके बाद उनकी कुर्सियों पर उनकी संतान नहीं बैठ सकती। दिल्ली के सिंहासन पर राष्ट्रपति बनने वाले व्यक्ति को जितना अधिकार है, उतना ही अधिकार राष्ट्रपति-भवन में सफाई करने वाली मेहतरानी का है। बिड़ला, डालमिया जैसे धनवानों का जितना अधिकार दिल्ली के सिंहासन पर है, उतना ही एक रिक्शा चलाने वाले का है।

इतना होने पर भी अमीर अमीर रह गया और गरीब गरीब रहा। एक वाक्य में कहें, तो गरीब तख्त का राजा तो बन गया, परन्तु मालिक नहीं बना। मान लें कि आज जो मालिक है, वह मजदूर बन जाय और मजदूर मालिक बन जाय, फिर भी मजदूर और मालिक तो बने ही रहे और मालिक-मजदूर का फर्क भी बना ही रहा। क्रांति तो तभी होगी, जब मालिक-मजदूर का भेद नहीं रहेगा।

जमीन जोतने वाला जमीन का मालिक

इसके लिए हमें ऐसा समाज कायम करना होगा, जिसमें जरूरत की चीज उसे मिलेगी, जिसे उसकी जरूरत है। विनोबा इसीलिए कहते हैं कि जो जमीन जोतता नहीं, उसे जमीन का मालिक नहीं रहना चाहिए; जमीन उसके हाथ में होनी चाहिए, जो जोतता है। इसी तरह काम करने के औजार उसके हाथ में रहे, जो वह काम करता है। जो स्त्री रोटी बनाती है, उसके पास चकला-बेलन होना चाहिए और जो लिखती है, उसके हाथ में कलम-कागज होना चाहिए।

हम आरम्भ जीवन से करते हैं। इसके कारण स्पष्ट ही हैं। सबसे पहला कारण यह है कि हमारा देश कृषि-प्रधान है। दूसरा यह है कि सबसे बड़ी समस्या भूख है। भूख का जवाब अन्न है। इसलिए इस देश में क्रांति की विभूति जमीन जोतने वाला किसान होगा। जमीन से आरम्भ करने का एक तीसरा कारण यह भी है कि उत्पादन के सारे साधनों का मूलभूत साधन, अखंड भण्डार यह धरती है। कोयला, लोहा, तेल, लकड़ी आदि उत्पादन की सारी सामग्री इसीमें से निकलती है। इसलिए हम कहते हैं कि जमीन का मालिक वह होगा, जो उस पर मेहनत करेगा। जिसकी जमीन पर मालकियत है, उसे उस पर मेहनत करनी चाहिए। जो मेहनत करेंगे, वे मालिक होंगे। जो मालिक होंगे, वे सब मेहनत करेंगे। सभी मालिक होंगे, सब मेहनती होंगे।

पैसे की कीमत घटायी जाय

आज हमारा राजा पैसा बन गया है। आज आदमी की मेहनत और गुण पैसे में बिकती है। जहाँ ये सब चीज पैसे में बिकने लगीं, वहाँ वोट भी पैसे में ही बिकेगा। जिसकी मेहनत बिकती है, उसका हक भी बिकेगा। इतना ही नहीं, कानून भी पैसे में बिक जाता है। कानून बन जाय, पर जिसके पास पैसा है, वह जीतता है। जिसके पास लाठी है, वह छीनता है। विनोबा लोगों को बतला रहे हैं कि पैसे की कीमत घटाओ और मेहनत की कीमत बढ़ाओ।

विनोबा कहते हैं कि अमीरी और गरीबी, दोनों बढ़नी चाहिए। दुःख और सुख, दोनों बँटने चाहिए। दुःख बाँटने से हल्का हो जाता है और सुख बाँटने से दुगुना हो जाता है। अमीरी और गरीबी, दोनों बँट जायँगी तो इन्सान में इन्सानियत आयेगी, एक-दूसरे से बिछुड़ेंगे नहीं, आपस में मिलेंगे। यह राम और भरत की क्रांति होगी।

आज दो प्रकार के गरीब हैं। एक वह जो मेहनत करता है, पर मालिक नहीं। दूसरा वह मजदूर है, जिसकी मालकियत है, परन्तु बहुत छोटी है। जिसकी छोटी मालकियत है, वह गरीब कहलाता है और जिसकी बड़ी है, वह अमीर। यदि ये छोटे-छोटे लोग अपनी मालकियत मिला लेते हैं, और जो मालिक नहीं, उन्हें भी मिला कर मालिक बना लेते हैं, तो इनकी बहुत बड़ी मालकियत बन जायगी और शक्ति बढ़ जायगी। इनके सामने आज जो बड़े-बड़े मालिक दिखाई पड़ते हैं, वे टिक नहीं सकेंगे।

तीन मुख्य कार्य

हमें इसके लिए तीन काम करने होंगे—पहला, जमाने का रुख बदलना होगा। दूसरा, दुनिया का नक्शा बदलना होगा। तीसरा, इन्सान की तबियत बदलनी होगी। इन्सान की तबियत आदमी पहले बदलता है, तो जमाने का रुख उसके साथ बदलता है और फिर दुनिया का नक्शा बदलता है। क्रांति की रफ्तार बढ़ाने के लिए तीनों काम साथ-साथ करने होंगे। आज १० आदमियों के पक्के मकान हैं, तो ९० के कच्चे। हम चाहते हैं कि आने वाले जमाने में सबके पक्के मकान हों या सबके कच्चे मकान हों। इस तरह आने वाले जमाने में एक की मुसीबत सबकी मुसीबत होगी और एक का मौका सबका मौका होगा। सबकी तरक्की होगी, तो एक की तरक्की होगी और एक की तरक्की होगी तो उसमें सबकी तरक्की होगी।

हुकूमत से कानून बनता है, परन्तु आदमी कानून से अपना बचाव निकालने का प्रयत्न करता है। इसी तरह तलवार आदमी को दबा सकती है, बदल नहीं सकती। कानून और तलवार से क्रांति नहीं होती, अर्थात् आदमी बदलता नहीं। आदमी को आदमी प्रेम से ही बदल सकता है। विनोबा आदमी को आदमी से मिलाने वाली क्रांति चाहते हैं, आदमी को आदमी से अलग करने वाली नहीं।

इसलिए जिसके पास जमीन है, वह अपने से गरीबों के लिए जमीन दे, जिसके पास संपत्ति है, वह अपने से गरीबों के लिए संपत्ति-दान दे और जिनके पास दोनों चीजें नहीं, वे श्रमदान दें। संपत्ति-दान से गरीबों को पैसा नहीं देना है, काम करने के लिए साधन देना है। विनोबा किसी को मोहताज नहीं बनाना चाहते। हम इस तरह परस्पर दान की क्रिया से इन्सानियत को बचाना और बढ़ाना चाहते हैं। यह क्रांति की प्रक्रिया अनूठी और अनोखी है।*

* मंडी चौक शहादरा में देहली की पदयात्रा-टोली की समाप्ति पर हुई स्वागत-सभा में किये भाषण से, २९-११-५६।

कार्यकर्ताओं को सनद और चेतावनी

(दामोदरदास मूँदड़ा)

"अब आप ऐन मौके पर ही जमीन बाँट सकते हैं," विनोबा ने कहा। यह बात उन्होंने तमिलनाड के भूदान-कार्यकर्ताओं से उस समय कही, जब कि वे नयी क्रांतिकारी व्यवस्था कार्यान्वित करने के प्रसंग में उनके निर्देश और आशीर्वाद प्राप्त करने के उद्देश्य से एकत्र हुए थे, क्योंकि यह नयी व्यवस्था उन्हीं की प्रेरणा से अमल में आने वाली है।

निश्चय ही यह बहुत बड़ी चीज है। अब तक हम सारे लोग केवल दानपत्र इकट्ठा करते हैं और जमीन का बँटवारा कितनी ही कठिनाइयों की वजह से बाद के लिए टल जाता है और उसका नतीजा यह होता है कि भूदान के दफ्तर में ढेर के ढेर दानपत्र जमा हो जाते हैं। और अब जब कि भूदान-समितियाँ ही भंग की जाने वाली हैं, तो यह जरूरी हो गया कि विनोबाजी हमें सनद, अधिकार-पत्र ("मॅग्नाचार्टा") प्रदान करें। पलनी के बाद से उनका दिमाग इस बात पर बराबर गौर करता रहा है कि इस नये क्रांतिकारी निश्चय को किस प्रकार सफलतापूर्वक कार्यान्वित किया जाय। प्रतिदिन नये-नये विचार उनके मन में आते रहे, जिनका निर्देश वे हम सबको करते थे, जिसमें लक्ष्य की पूर्ति शीघ्रतापूर्वक की जा सके।

विनोबा ने कहा, "तुम जैसा उचित समझो, करो। अपने दिमाग से सारे बोझ हटा दो। अपनी योजनाएँ पूरी तरह अमल में लाओ।" निश्चय ही वे चाहते हैं कि कार्यकर्ताओं को काम करने की पूरी आजादी मिले, उनका रास्ता साफ रहे। कोई संस्था या कोई व्यक्ति उनके मार्ग में बाधक न बने। अब उनको पूरी आजादी दे दी गयी है कि वे अपनी कार्यक्षमता, कौशल और कल्पना-शक्ति का ठीक ढंग से उपयोग करें।

इस प्रकार विनोबा ने उन्हें सनद भी दी और चेतावनी भी। विनोबा ने कहा, "अगर तुम इस बार विफल हुए तो आंदोलन को ही क्षति नहीं पहुँचेगी, बल्कि तुम्हारा सार्वजनिक जीवन भी नष्ट हो जायगा। तुम कहीं के नहीं रहोगे और तब उसका नतीजा यह होगा कि अवकाश-प्राप्त एकांत जीवन ही तुम्हें बिताना पड़ेगा।" निश्चय ही वे सर्व-सेवा-संघ से या स्वयं विनोबाजी से आवश्यक परामर्श और निर्देश समय-समय पर प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु उन्हें खड़ा अपने ही पैरों पर होना है और पूरे आंदोलन को जनता का आंदोलन बना देना है।

www.vinoba.in

भूदान-समितियों को खत्म कर देने से और आंदोलन को आत्मनिर्भर बनाने तथा केंद्रीय निधि से मुक्त रखने का विचार नया नहीं है। वेझवाड़ा में जब गत वर्ष दिसम्बर में बैठक हुई थी, तो उस समय भी विनोबाजी ने यह प्रस्ताव रखा था, जो यदि उस समय स्वीकार हो गया होता, तो आज हमारी शक्ति में महान् परिवर्तन हो गया होता। विनोबाजी ने कहा कि "कुछ मसलों पर तत्काल निर्णय की जरूरत होती है। देर करना हमेशा खतरनाक होता है। जब तक हम समितियाँ खतम नहीं करेंगे, तब तक हम सोच भी नहीं पायेंगे कि किस तरह आगे बढ़ें। एक यही सही कदम हमें दूसरे सही कदम पर ले जायगा।"

जिला-प्रतिनिधियों की, जिन्हें विनोबा लोक-सेवक कहते हैं, चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि अब वे सिंह की भाँति विचरण करेंगे। न उन पर कोई बंधन रहेगा और न सर्वव्यापक भगवान् के अतिरिक्त उनका दूसरा कोई सहायक होगा।

उन्होंने इसके तीन कारण बतलाये: "(१) कुछ लोग ऐसे हैं, जो सत्ता के माध्यम से सेवा में विश्वास करते हैं, (२) कुछ लोग ऐसे हैं, जो यह समझते हैं कि सेवा सत्ता प्राप्त करने का साधन है, (३) लेकिन कुछ सेवक ऐसे हैं, जिनकी निष्ठा ऐसी है कि सेवा के जरिये सत्ता समाप्त की जा सकती है। पहले और दूसरे प्रकार के लोग एक ही सिक्के के दो रूप हैं। लेकिन हमारा उद्दिष्ट बिलकुल भिन्न है; वह है शुद्ध सेवा। ऐसी सेवा, जिसके जरिये सत्ता समाप्त की जाय, और तभी लोकसत्ता अपने आप अभिव्यक्त होगी।"

कुछ संदेह हैं, जिनका निराकरण आवश्यक है। सेवक अपना निर्वाह किस प्रकार करेंगे? यदि दाता, जो सेवक की जीविका भी जुटाता है, उसको प्रभावित करने का प्रयत्न करे, तो उस हालत में सेवक क्या करेगा? कम योग्यतावाले और छोटे दर्जे के कार्यकर्ता यदि स्थानीय लोगों को सचेष्ट न कर सकें, तो क्या होगा? क्या वे भूदान का काम छोड़ देंगे? भूदान का जवाब यह है कि जो अपने पैरों पर खड़े नहीं हो सकते और स्थानीय साधन जुटा नहीं सकते, उन्हें दूसरे रचनात्मक कार्यों में लग जाना चाहिए। उनके लिए खादी का कार्य, साहित्य-बिक्री का कार्य हो सकता है। जहाँ तक भूदान का सवाल है, यह बात बिलकुल स्पष्ट हो जानी चाहिए कि अब यह काम किसी समिति के जिम्मे नहीं रहेगा, बल्कि पूर्ण रूप से जनावलंबी हो जायेगा।

इस आशंका की चर्चा करते हुए कि आदाता पर दाता प्रभाव डाल सकता है, विनोबा ने कहा, "यह बात ही बिलकुल गलत है। हम किसी ऐसे दाता का दान स्वीकार ही कैसे कर सकते हैं कि जिसका उद्देश्य ठीक न हो। सब कुछ कार्यकर्ताओं के आत्मविश्वास पर निर्भर है। उन्हें यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि अब आंदोलन का पूरा स्वरूप ही बदल गया है। अब तक वे अपने निकट के साथियों या इस कार्य में लगे लोगों से परामर्श करते थे। किंतु अब तो उन्हें यह काम अपने घर से ही आरंभ करना होगा। सेवकों को पहले अपनी पत्नी से और बच्चों से पूछना पड़ेगा। वे चाहें तो अपने परिवार के लोगों के साथ पदयात्रा कर सकते हैं और अपने मित्रों का सहयोग प्राप्त कर सकते हैं। हर कदम पर उन्हें नयी शक्तियाँ प्राप्त होंगी। अपना दिल मजबूत करके और ईश्वर की सहायता पर भरोसा करके आगे बढ़ना होगा।"

श्री जगन्नाथन्‌जी के यह पूछने पर कि क्या कार्यकर्ताओं के लिए कोई प्रतिज्ञा-पत्र भी होगा, विनोबाजी ने लोक-सेवकों के लिए प्रतिज्ञा-पत्र* का मसविदा लिखा दिया। प्रतिज्ञा-पत्र का लिखा जाना समाप्त होने के बाद एक के बाद एक कई मित्रों ने प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर कर विनोबाजी को दे दिये। एक कार्यकर्ता ने कहा, "आज आपने यह दीप प्रज्वलित किया है, जो निरंतर जलता रहेगा। इसमें आप अपने प्रेम का स्नेह देना न भूलें।"

विनोबा ने उत्तर दिया, "वह तो है ही। क्या मैं उसमें निरंतर स्नेह नहीं उँडेल रहा हूँ? यह आप सबके प्रति हमारा प्रेम ही है, जो मैंने यह नया रास्ता सुझाया है। मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि हमारे अधिकांश कार्यकर्ता इस आह्वान का स्वागत करेंगे और निश्चल निष्ठा एवं नित्य बढ़ती हुई शक्ति के साथ इस कार्य में योग देंगे।"

* देखें, 'भूदान-यज्ञ,' १४ दिसंबर, पृष्ठ १०

ॐ नमो नारायण पुरुषोत्तमाय

(काका कालेलकर)

उच्च आशय रखने वाले-समाज सेवक का यह ध्यान-मंत्र है। मनुष्य-समाज की धार्मिक उपासना की आधुनिक, शास्त्र-शुद्ध और अत्यन्त उन्नत कक्षा इस मंत्र में व्यक्त होती है।

नारायण यानी मनुष्य-समाज के हृदय में बसा हुआ अंतर्यामी परमात्मतत्त्व। इसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार है: नर यानी मनुष्य; इसमें स्त्री-पुरुषादि सब आ गये। इन सबका त्रिकालव्यापी जो समूह अथवा समाज बनता है, उसको नार कहते हैं। नार यानी समस्त मनुष्य-कोटि, मानव। पहले जो हो गये, आज जो मौजूद हैं और आगे जो होंगे, ऐसे सब मनुष्य-प्राणियों का अन्तर्भाव जिसमें होता है, ऐसी सनातन मनुष्य-जाति को नार कहते हैं।

यह नार जिसका अयन यानी आश्रय-स्थान हुआ वह, मनुष्य हृदय में अखंड व्यक्त होने वाला परमात्मा, नारायण नाम से पहचाना जाता है। इस विश्व में जो कुछ जड़ है, वह नश्वर है, निस्सार है। सारूप, सनातन, शुद्ध और नित्य और इसलिए अन्वेष्टव्य, मृग्य और प्राप्य ऐसा जो नारायण-तत्त्व उसी को जीवन का ध्येय बनायें, उसी के लिए और उसी में ही जीयें, ऐसी दृढ़ निष्ठा रखने वाला बलवान्, युवान, भक्त सत्याग्रही प्रह्लाद नारायण का उपासक था। इसलिए नारायण नाम के साथ-साथ सत्य की वीर्ययुक्त अनन्य उपासना का भी स्मरण होता है। प्रत्येक नर को यानी स्त्री-पुरुष को जीवन-साधना के द्वारा अन्त में नारायण-स्वरूप ही होना है। ऐसा प्राचीन और अर्वाचीन महात्मा कहते आये हैं। नारायण का ध्यान करने के मानी हैं नर जन्म का अन्तिम उद्दिष्ट अथवा ध्येय अखंड ध्यान में रखना। 'नर का अन्तिम और अनन्त विकास' यही है नारायण-तत्त्व।

यह अवस्था आज हमें प्राप्त नहीं है। लेकिन यथाशक्य उपायों से यथाशीघ्र यह स्थिति प्राप्त कर लेने की है। इसकी स्मृति और साधन 'नमः' शब्द से व्यक्त होती है। नदी जिस तरह सागर की ओर बहती है, उसी तरह अपूर्ण का पूर्ण की ओर बहना, इसी को 'नमस्कार' कहते हैं। पुरुष हैं नव-द्वार वाले इस पुर में अर्थात् देह में शयन करने वाला, रहने वाला, वास करने वाला आत्मा, साधना-क्षम जीव। स्त्री और पुँमान्, दोनों का इसमें समावेश होता है। दिन शब्द में जिस तरह दिन और रात, दोनों का समावेश हो सकता है, अथवा पितर शब्द में माता और पिता दोनों का समावेश होता है, उसी तरह 'पुरुष' शब्द में पुरुष और स्त्री उभय का समावेश होता है। वह पुरुष व्यक्ति-रूप में एक देह में रहता है; वही समाज-रूप में त्रिकालव्यापी समुदाय में रहता है, और विराट् रूप से सारे विश्व में उसका अस्तित्व है। व्यक्ति में जिस तरह हम इसको 'पुरुष' रूप में 'परसनैल्टी' के तौर पर पहचानते हैं, उसी प्रकार सारे विश्व में सूर्य-चन्द्रादि ग्रह-नक्षत्र तारों के समुदाय में भी पुरुष रूप से ही उसको देखना चाहिए। मनुष्य समाज के बारे में सोचते समय भी समस्त रूप से वह एक पुरुष ही है, यह हमें याद रखना चाहिए।

'पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं यच्च भव्यम्'—विविध वर्णनात्मक मनुष्य समाज भी एक अविकल पुरुष ही है। इस पुरुष के दो पहलू हैं—क्षर और अक्षर। भूत रूप से देखते, लगता है कि वह क्षर है। उसके कूटस्थ तत्त्वों का विचार करते मालूम हो जाता है कि वह अक्षर है। इस अक्षर की सब साधना जिस आदर्श को सिद्ध करना चाहती है, उस पुरुष-तत्त्व की अन्तिम भूमिका का नाम है 'पुरुषोत्तम'। आज का मनुष्य अपूर्ण है, असम है और सदोष है। उसको पूर्ण सम और निर्दोष अर्थात् भूमा और बृहत् बनना है यानी पुरुषोत्तम बनना है। विराट् पुरुष का यह जो अन्तिम आदर्श है, वही है पुरुषोत्तम। आत्मौपम्य द्वारा विश्वात्मैक्य का साक्षात्कार कर लेने पर ही यह पुरुषोत्तम-पद प्राप्त हो सकेगा। इसलिए विश्वात्मैक्य ही है पुरुष का पुरुषार्थ। मोक्ष विश्वात्मैक्य का केवल प्राथमिक साधन है। धर्म-अर्थ-काम, यह त्रयी जिस हद तक मोक्ष की ओर ले जाने वाली हो, उस हद तक उसे भी उपलक्षणा से पुरुषार्थ कहने में कोई आपत्ति नहीं है। पुरुषोत्तम-प्राप्ति के लिए पुरुष को जो साधना करनी है, जो पुरुषार्थ करना है, जो निरलस, अखंड और वर्धमान पराक्रम करना है, उसकी अभिव्यक्ति 'नमः' शब्द से की गयी है।

इन सबका आदि कारण अथवा मूल आधार ऐसी आस्तिक रूपी जो सनातन श्रद्धा है, उसी का नाम है 'ॐ'। 'ॐ' यानी हाँ। जहाँ नकार को, निषेध को, अभाव को, अश्रद्धा को तनिक भी स्थान नहीं है, ऐसी पदवी को, ऐसी वृत्ति को, ऐसी श्रद्धा को 'ॐ' कहते हैं। ॐ है अजर, अमर और अखंड आस्तिकता। मेरा जीवन सत्य-रूप है, उसका अन्तिम आदर्श सत्य-रूप है, उस आदर्श तक पहुँचना

www.vinoba.in

सम्भव है; यह 'पहुँचने' की यात्रा अथवा साधना भी कृतार्थ होने की शक्ति रखती है, ऐसा जो दृढ़ विश्वास, वही है ओंकार। सच्चिदानन्द प्रभु से वह भिन्न नहीं है। इसलिए उसका स्मरण करके ही सब ध्यान चलाना चाहिए। उसका ध्यान करके ही सब साधना यानी पराक्रम करना होता है। यह साधना जैसे-जैसे सिद्ध होती जायगी, ध्येय का जैसे-जैसे साक्षात्कार होता जायगा, वैसे-वैसे प्राप्ति का आनन्द भी बढ़ता जायगा। वह आनन्द भी मंत्र से ही व्यक्त होता है।

यह सब हेतु मन में रख कर ही इस मंत्र का सरहस्य जाप कहा गया है।

('मंगल प्रभात' से)

चोकर मनुष्य की खुराक है, पशुओं की नहीं

(जो. कॉ. कुमारप्पा)

मतलबी लोग यह झूठा प्रचार कर रहे हैं कि पशुओं की खुराक में पौष्टिकता के लिहाज से चावल की भूसी रखना जरूरी है। नीचे के अधिकृत अवतरणों से इसका झूठापन सिद्ध होता है।

"बंगाल और हिन्दुस्तान के चावलवाले अन्य प्रदेशों में हम देखते हैं कि वहाँ के मवेशी बहुत कमजोर रहते हैं और इसका कारण है धान की पयाल और चावल की भूसी। बंगाल में जो प्रयोग किये गये हैं, उनसे यह सिद्ध हो गया है कि चावल की भूसी एक निकम्मी चीज है। उसमें कुछ तेल का अंश रहता है, पर प्रोटीन और कॅल्शियम नहीं के बराबर रहता है। उसमें का फॉस्फरस न घुलने वाला है और मॅग्नीशियम की मात्रा इतनी अधिक रहती है कि वह नुकसान करती है।

"सन् १९३७ में बंगाल में श्री कारवेरी और चटर्जी ने चावल की भूसी पर जो प्रयोग किये, उनसे यह सिद्ध हुआ कि चावल की भूसी में जीवनतत्त्व 'ब' बहुत बड़े प्रमाण में रहता है और उस जीवनतत्त्व की कमीवाले लोगों को वह ताजी खानी चाहिए, ऐसी सिफारिश की गयी है।" ('कृषि और हिन्दुस्तान के मवेशी', १९३८)

चावल की भूसी में कुछ प्रोटीन रहता है और तेल का प्रमाण बहुत ज्यादा... पृथक्करण करने पर पाया गया कि चावल की भूसी में ६% से अधिक फॉस्फरस, २·६% मग्नेशिया और केवल ०·२% चूना या कॅल्शियम रहता है। बंगाल के इस प्रयोग से यह सिद्ध हुआ कि जितनी कल्पना की जाती थी उतनी अच्छी यह खुराक नहीं।

चावल की भूसी की पचन-क्षमता

"पचन-क्षमता की जाँच करने पर पता चला कि करीब दो-तिहाई से तीन-चतुर्थांश तक प्रोटीन बिना पचा ही निकल जाता है। फॉस्फरस तो समूचा ही बिना पचा रह जाता था। वास्तव में १० ग्राम फॉस्फरस मवेशी के स्वास्थ्य के लिहाज से पर्याप्त है, पर ४३ ग्राम तक फॉस्फरस खुराक में रहते हुए भी सारा का सारा ज्यों का त्यों निकल जाता था और अपने साथ शरीर की अन्य पेशियों को भी ले जाता था। प्रयोग करने वालों की मान्यता है कि चावल की भूसी में का फॉस्फरस फायटीन के रूप में रहता है, जो जल्द नहीं घुलता। चूने की कमी, मॅग्नेशिया की अत्यधिकता और फॉस्फरस की अपाच्यता, इनके कारण चावल की भूसी खुराक की दृष्टि से बेकार ही है। फिरोजपुर में श्री गॉसिप ने ३ से ३॥ सेर चावल की भूसी खिलाने के प्रयोग किये। इसका इतना विपरीत परिणाम निकला कि तीन मवेशी मर गये। पर ३ से ३॥ सेर भूसी अत्यधिक खुराक है, इसमें कोई शक नहीं। अब तक के चावल की भूसी के प्रयोगों से यही सिद्ध हुआ है कि मवेशियों की खुराक की दृष्टि से वह बेकार है।" (सतीशचंद्रदास गुप्त-"दी क्राऊ इन इंडिया" खंड १, पृष्ठ ७९३, ८५७, ८५८, ८५९)

"थायमीन (जीवनतत्त्व ब$_१$) मुर्गी के बच्चे, कबूतर, चूहे, कुत्ते और मनुष्य इनकी खुराक में रहना जरूरी है। जुगाली करने वाले मवेशियों की खुराक में वह रहना जरूरी नहीं है क्योंकि उनके पहले पेट में ही वह अन्य द्रव्यों के संयोग से आप ही आप तैयार हो जाता है। (मॅक ऐलरॉय और गॉस; वेग्नर, बूथ, ऐलेहीम और हार्ट; हंट और उनके साथी) उस पेट में जो कीटाणु मौजूद रहते हैं, उनके संयोग से शायद यह थायमीन वहाँ पैदा होता है।" (एच. एच. ड्यूक्स, डी. व्ही. एम. एम. एस, मवेशियों के शरीरशास्त्र के प्रोफेसर, कॉर्नेल विश्वविद्यालय, 'पालतू मवेशियों का शरीरशास्त्र' १९४३, पृष्ठ ४६८)

"सन् १९२६ में बेकड़ेल और उनके साथियों ने जीवन-तत्त्व "ब" बहुत कम रख कर खुराक के कुछ प्रयोग किये। चूहों पर इस खुराक का इतना बुरा असर हुआ कि उनकी वृद्धि रुक गयी और २ से ५ हफ्तों में वे मर गये, पर उसी खुराक पर बछड़े बखूबी बढ़ सके और उनकी प्रजनन-क्षमता कायम रही। इससे उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि या तो बढ़ते हुए बछड़ों को चूहों की तुलना में बहुत कम जीवन-तत्त्व 'ब' की जरूरत होती है या फिर वह उनकी पाचन-संस्था में किन्हीं द्रव्यों के संयोग से आप ही आप तैयार हो जाता होगा। ये सब बिलकुल शुरू के प्रयोग हैं। इनके बाद भी कई प्रयोग हुए और उनसे यह सिद्ध हुआ कि जुगाली करने वाले मवेशियों के पहले पेट में उनके शरीर की धारणा के लिए आवश्यक जीवनतत्त्व बी$_१$ और अन्य 'ब' जीवनतत्त्व आप ही आप पैदा होते रहते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि मवेशियों की खुराक में जीवनतत्त्व 'बी$_१$' और अन्य जीवनतत्त्व 'बी' रहने की जरूरत नहीं।" (एल. ए. मेनार्ड, पौष्टिकता और शरीरविज्ञान के प्राध्यापक, कार्नेल विश्वविद्यालय, यू. एस. ए. १९५१, पृष्ठ २०१)

"इस सूबे में मवेशियों की खुराक में चावल की भूसी रहती ही है। इस खुराक में विजातीय द्रव्य आ जाने से उसका खुराकी मूल्य घट जाता है और मवेशी को और उसके मालिक को भी नुकसान पहुँचाता है। आम तौर से इसमें धान के छिलके का भूसा मिला रहता है और धान की यंत्र द्वारा पिसाई से यह चावल की भूसी में जरूर मौजूद रहता है। इस क्रिया में धान के ऊपर का छिलका बेदाग निकलना संभव नहीं रहता। वह बहुत सारा पिस जाता है और चावल की भूसी में मिल जाता है। चावल की भूसी के नाम पर यही मिश्रण बहुतायत से बेचा जाता है। कुछ मिहनती काश्तकार इस भूसी को छान कर छिलके का भूसा चावल की भूसी से अलग करते हैं और साफ भूसी ही मवेशियों को खिलाते हैं। पर बदकिस्मती से ऐसे मिहनती किसान बहुत कम ही होते हैं। बहुतेरे लोग बाजार में जो भूसी मिलती है, वही मवेशियों को खिलाते हैं। उसमें से छिलके का भूसा छान कर अलग नहीं निकालते। जो मवेशी खुराक पर टूट पड़ते हैं या जिनकी पाचनशक्ति क्षीण हुई रहती है, उन पर उस खुराक का बुरा असर होता है।

"अभी कुछ ही दिनों की बात है कि कई जगहों पर मवेशियों की काफी तादाद में मौत हुई। जाँचने पर पता चला कि इसका कारण यह था कि उन्हें धान के छिलके का भूसा-मिश्रित चावल की भूसी खिलायी गयी थी। इसलिए यह उचित मालूम होता है कि किसानों का तथा मवेशियों के अन्य मालिकों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाय कि किस प्रकार ऐसी भूसी से मवेशियों को नुकसान पहुँच सकता है। यह विज्ञप्ति इसी इरादे से निकाली गयी है।

"ऐसी खुराक पर रखे गये मवेशियों पर का बुरा असर एकदम नहीं दिखाई देता। कुछ दिनों के या कभी-कभी कुछ हफ्तों के बाद ही यह बुरा असर दिखाई देता है। बुरे असर का पहला लक्षण है पेट का फूलना। ऐसा पेट फूलने के बाद मवेशी के रीढ़ की कमान हो जाती है और उसे साँस लेना मुश्किल होता है। पेट फूलने के साथ ही साथ उसे पतले दस्त भी होने लगते हैं और वे बारबार होते हैं। कुछ मवेशियों के पेट में तीव्र पीड़ा भी होती है, जिसके कारण वे घड़ी में बैठते हैं और घड़ी में खड़े हो जाते हैं।" (पत्रक नं. १७, पशु-चिकित्सा विभाग, मद्रास)

इस पर से यह स्पष्ट है कि चावल की मिलें दोहरा नुकसान पहुँचाती हैं। आज मनुष्य की खुराक में जिस पौष्टिक तत्त्व की जरूरत है, वह वहाँ से हटा कर मिलें मवेशियों को मुहैया कराती हैं, जिन्हें उसकी जरूरत कतई नहीं है। इस प्रकार वे किसान और उसके मवेशी, दोनों को तबाह कर रही हैं।

('ग्राम-उद्योग-पत्रिका' से)

मानवता के दर्शन

संकट के समय मानव का हृदय अपने सहजीवी के प्रति कितना सहानुभूतिपूर्ण होता है, इसकी असंख्य मिसालें दी जा सकती हैं। अभी उत्तर-प्रदेश में छोटी गंडक के किनारे देवरिया के क्षेत्र के कुछ हिस्से में जो तबाही बाढ़ के कारण देखी, उसकी कोई मिसाल नहीं है। बाबा राघवदासजी ने एक पत्र में लिखा : "जब रोज-रोज संकट आते हैं, तो आँसू भी सूख जाते हैं। जब एकसाथ मरते हैं, तो अब जीयें भी एकात्म-भाव से ही।"

पड़ोस के सारन जिले ने अपनी कीर्ति के अनुसार अपनी गरीबी के बावजूद मदद की, जब कि सरकारी सहायता असफल साबित हुई। अकेले राष्ट्रपतिजी के जीरादेई गाँव ने ही पाँच सौ मन गल्ला और सामान दिया। व्यक्तिगत सहानुभूति की घटनाएँ देख कर तो हृदय भर आता है। ४) रोज कमाने वाला एक छोटा व्यापारी, जो मकई बेचता है, अपनी ४ दिन की गाढ़ी कमाई लाकर अर्पित करता है। एक लंगड़ा सूरदास अपनी भीख के बारह आने पैसे में से चार आने रख कर आठ आने का सत्तू लाकर देता है! एक नहीं, अनेक घटनाएँ इस प्रसंग में सामने आयीं, जिन्होंने मानवता के अखंड दर्शन कराये।

—सत्यदेव द्विवेदी

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

२१ दिसंबर सन् १९५६

सरकार पर वजन क्यों न डालें ?

(वीनोबा)

(१) हमें जनशक्ती पैदा करनी है। सरकार के जरीये काम होता है, तो जनशक्ती पैदा नहीं हो सकती। (२) कानून से जमीन छीन कर बांटी जाय, तो ज़मीन वाले दुश्मन होंगे। अनमें और भूमीहीनों में द्वेष पैदा होगा, कचहरी में मुकदमे चलेंगे। लेकीन प्रेम से जमीन बंटेगी, तो समाज में प्रेम और सहयोग पैदा होगा। हम तो जमीन के दाताओं से भूमीहीनों के लीअे बैल-जोड़ी, बीज आदी अन्य साधन भी मांगते हैं और वे देते हैं। क्या सरकार कानून से जमीन छीनने पर बैल भी मांग सकेगी ? अुलट जमीन वालों को मुआवजा देना पड़ेगा। (३) कानून से जमीन छीनी जाय, तो क्या सरकार को अच्छी जमीन मील सकती है ? लोग अपनी रद्दी से रद्दी जमीन सरकार के लीअे रखेंगे। भूदान में भी कुछ खराब जमीन मीलती है, परंतु अच्छी भी मीलती है और प्रेम से मीलती है। सरकार को तो आलीस खराब जमीन मीलेगी। (४) कानून की बात सुनने पर लोग आपस में जमीन बांट लेते हैं, जीससे की सरकार के हाथ कुछ न जावे। (५) सरकार तीस अेकड़ का 'सीलींग' बनाने की बात सोचती है। परंतु, हम तो दो-चार अेकड़ वाले से भी दान मांगते हैं। (६) मान लीजीये की अभी सरकार ने कानून बनाया, तो अुसके परीणामस्वरूप गांव-गांव में द्वेष और असंतोष पैदा होगा। फीर महायुद्ध शुरू हो, तो चीजों के दाम बढ़ेंगे, तो और भी असंतोष बढ़ेगा। अीस हालत में क्या आपकी सरकार टीकेगी ? (७) जो काम जनशक्ती से होता है, वह सरकारी शक्ती से कैसे हो सकेगा ? भूदान से जो काम बन सकता है, वह सरकार से नहीं बन सकता। अेक प्रेम की प्रक्रीया है, दूसरी छीनने की प्रक्रीया। कीसी ने ब्रह्मचर्य का व्रत लीया, तो अुसमें कीतना तेज आयेगा ? परंतु, क्या जेल में बैस साल रहने वाले चोर को ब्रह्मचर्य का लाभ होगा ? भूदान में सीर्फ जमीन नहीं मीलती है, प्रेम भी बढता है। अब तो ग्रामदान भी हो रहे हैं। क्या सरकार से ग्रामदान हो सकेगा ? (८) सबसे बड़ी बात यह है की आप समझते हैं की बाबा का सरकार पर वजन है, परंतु वह वजन अीसलीअे है की बाबा वह वजन ज्यादा अुपयोग में नहीं लाता। लोग संन्यासी का आदर करेंगे, अुसे छीलायेंगे। परंतु, क्या वह आपके लड़के को ही संन्यास देगा, तो आप अुसे पसंद करेंगे ? अीसलीअे बाबा का सरकार पर जो वजन है, वह अुस कोटी का नहीं है की वहां के सब लोगों का परीवर्तन हो। स्वराज्य के बाद जीन्होंने जमीन बटोर ली, अुन्हीं के हाथ आज सरकार है। क्या अैसी सरकार यह काम करेगी ?

(पट्टाभीरामपट्टी, मदुरा, ३-१२)

कम्यूनिस्टों से मित्रतापूर्ण निवेदन : २.

(जयप्रकाश नारायण)

अतएव क्रुश्चेव का भाषण प्रचलित कम्यूनिस्ट निष्ठा का गंभीर पुनः परीक्षण करने का अवसर माना जाना चाहिए। कम्यूनिस्ट चाहते क्या हैं ? वे किस चीज के लिए लड़ रहे हैं ? प्रमेयों के लिए या मनुष्यों के लिए ? किसी पद्धति के लिए या जीवन के विशिष्ट मूल्यों के लिए ? आखिर उनकी साध उनका ध्येय है या उसके साधन ? क्या सत्ता अपने में एकमात्र उद्देश्य हो सकता है ? राष्ट्रीकरण और समष्टिकरण अपने में साध्य हैं या किसी साध्य के वे साधन हैं ? क्या मनुष्य, मानवीय व्यक्ति, अपने में साध्य हैं, जिसका महत्त्व सर्वोपरि है ? या फिर वह समाज-निर्माण की प्रक्रिया का एक औजार मात्र है ?

कुछ ऐसा मालूम होता है कि कम्यूनिस्ट लोग पेड़ गिनने में इतने मशगूल हो गये कि जंगल को देख ही नहीं पाते हैं। अंतिम साध्य और अंतिम मूल्य उनकी आँखों से ओझल हो गये हैं। यदि क्रुश्चेव का यह भाषण कम्यूनिस्टों को उनकी आत्ममूर्च्छा से मुक्त कर दे और विस्मृत मूल्यों की तरफ से उन्हें जाग्रत कर दे, तो अनजाने वह कम्यूनिज्म को चिरस्थायी करने का श्रेयभागी होगा।

वे कौनसे मूल्य हैं, जिनको कम्यूनिज्म ने अपने सामने रखा था ? मानवीय स्वतंत्रता, मानवीय प्रतिष्ठा, मानवीय सख्य, समत्व, शांति; ये ही तो वे मूल्य थे न ? क्या उनकी स्वतंत्रता की कल्पना इतनी भव्य नहीं थी कि अंत में राज्य ही विलीन हो जाय और व्यक्तिनियंत्रण के बदले वस्तुनियंत्रण की व्यवस्था कायम हो ? क्या उनके सख्य की कल्पना इतनी व्यापक नहीं थी कि उसके दायरे में समस्त मानव-जाति का समावेश हो ? क्या उनकी समत्व की कल्पना उस उदात्त सूत्र में व्यक्त नहीं हुई कि हरएक से उसकी सामर्थ्य के अनुसार लिया जायगा और हरएक को उसकी आवश्यकताओं के अनुसार दिया जायगा ? 'क्रान्तिकारी हिंसा', श्रमिकों का अधिराज्य, 'लोकतांत्रिक केंद्रवाद', राष्ट्रीकरण, समष्टिकरण; ये सब इन उज्ज्वल उद्देश्यों के साधन थे। अब उन उद्देश्यों का क्या हुआ ? क्या वे कहीं दृष्टिगोचर भी होते हैं ? क्रान्ति के चालीस वर्ष बाद भी मानवीय स्वातंत्र्य और मानवीय प्रतिष्ठा पैरों तले कुचली जा रही है। राज्यसंस्था विलीन होने के बदले एक सर्व-सत्ताधारी अजस्र असर में परिणत हो गयी। समता एक दूर का सपना है। आन्तर्राष्ट्रीय बंधुत्व एक नये उपनिवेशवाद में बदल गया है, जिसके खिलाफ पोलैंड निवासी, हंगेरियन लोग और उनसे पहले युगोस्लाव लोग बड़ी वीरता से लड़ रहे हैं। शांति का मतलब हो गया है युद्ध की सिद्धता।

भारत के मेरे कम्यूनिस्ट दोस्त यह सब देख कर क्या सोच रहे हैं, यह विचार मेरे मन में आता है। मुझ जैसे जिन नाक्षिप्त व्यक्तियों ने सत्य के प्रति उनकी आँखें खोलना चाहा, उनकी उन्होंने बरसों निंदा और भर्त्सना की है। अब जब कि स्वयं कम्यूनिस्टों ने ही पर्दा-फाश कर दिया है, तो क्या आज भी वे देखने से इन्कार करेंगे ? मुझे कम्यूनिज्म के विरोध में या रूसीवाद के विरोध में कोई दिलचस्पी नहीं है। भारतीय समाजवादी स्टॅलिनवाद और सोवियत सर्व-कषसत्तावाद के आलोचक अवश्य रहे हैं, लेकिन सिद्धान्त के रूप में वे कम्यू-निज्म के प्रतिकूल कभी नहीं रहे। जहाँ-जहाँ कम्यूनिज्म ने ऐसा संकेत दिखलाया कि वह एक अत्याचारी राज्य में परिणत नहीं हुआ है और अपने मूलभूत मूल्यों के लिए कुछ चिन्ता रखता है, वहाँ-वहाँ हमने मित्रता का हाथ बढ़ाने में कभी देर नहीं की। इसलिए जब प्राग से पेकिंग तक के सारे कम्यूनिस्ट टीटो को फासिस्ट कुत्ता कह कर और युगोस्लाविया को पाश्चात्य साम्राज्यवाद का अनुयायी बतला कर दोनों का धिक्कार कर रहे थे, उस वक्त इस देश में सबसे पहले समाजवादियों ने मार्शल टीटो का और कम्यूनिस्ट युगोस्लाविया का अभिनंदन किया था। मैं यह भी कह दूँ कि युगोस्लाविया के लिए यह दिलचस्पी आज भी मौजूद है। हालाँकि उस देश में इधर कुछ महीनों में ऐसी कुछ घटनाएँ घटी हैं, जो परेशानी पैदा करती है। मैं कहना यह चाहता हूँ कि क्या आज के कम्यू-निस्टों में इतनी हिम्मत और क्रांतिकारी वृत्ति है कि वे अपने अतीत से इन्कार करें, गलत रास्तों को छोड़ दें, निःसत्त्व अंश का त्याग करें, अपनी अधिकार-लंपटता को रोकें, जिससे कि कम्यूनिज्म के मूलभूत भव्य आदर्श का उन्हें फिर से आकलन हो और वे उसे एक सजीव वास्तविकता में परिणत कर सकें।

www.vinoba.in

अहिंसा के लिए त्रिविध निष्ठा आवश्यक : २.

(विनोबा)

हरिभाऊजी ने कुछ दिन पहले अहिंसक सेना वगैरह के बारे में दो-तीन पत्र लिखे थे। पर उसमें इतनी कल्पना है कि फौज आकर कुछ करे, उसके पहले हमारी शान्ति-सेना ही लोगों को रोकने की कोशिश करे। उसे अगर यश नहीं मिला, तो फिर फौज आनी चाहिए। यह जो विचार है, वह मुझे बहुत ही तकलीफ देता है। इसमें आखिरी विश्वास फौज पर, हिंसा पर है, याने परमेश्वर हिंसा है। हमारे सारे प्रयत्न 'फेल' हो जायँ, तब हम ईश्वरशरण हो जाते हैं। जब तक प्रयत्न 'फेल' नहीं होते, तब तक प्रयत्न करते ही हैं। वैसे ही अहिंसा आदि पहले कुछ तो कर लो, लेकिन अगर वह न जीते, तो लाचारी से हिंसा करनी ही पड़ेगी। हमारे समाज का यह जो चिन्तन है कि आखिरी इलाज हिंसा का करना पड़ेगा और उसीसे काम होगा, ये दो विश्वास—बाकी के सब शस्त्र पहले आजमा लें और फिर आखिर में हिंसा के शस्त्र को आजमाना पड़े तो जरूर उसे आजमाना चाहिए, यह एक विश्वास और हिंसा से ही काम होगा, तात्कालिक ही सही, लेकिन काम तो हो जायगा, यह दूसरा विश्वास—ये दोनों मिल कर एक ही विश्वास है। इस प्रकार का विश्वास हम समाज में सर्वत्र देखते हैं। हमको ऐसी सेना बनानी होगी, जिसके सैनिकों को कुछ गुणों का अभ्यास होना चाहिए। उस गुणाभ्यास में आज अहिंसा का क्या अमल हम कर सकते हैं, क्या हम समाज के किसी हिस्से का जीवन, यह सारी हिंसा दुनिया में चलती होगी उसके बावजूद, उससे निर्लिप्त रह सकते हैं और एक स्वतंत्र शक्ति निर्माण कर सकते हैं, जो उसका मुकाबला करे, इस विषय पर हमको सोचना चाहिए।

अपरिग्रह का महत्त्व

अहिंसा और सत्य की बात तो मैंने की। बाकी के सब तत्त्व इसीमें से निकलते हैं। इसलिए उनके स्वतंत्र उल्लेख की जरूरत नहीं, ऐसा भी मान सकते हैं। फिर भी विशेष परिस्थिति में दूसरे तत्त्वों के उच्चारण की आवश्यकता होती है और उनके लिए स्वतंत्र आयोजन करने की जरूरत पड़ती है। हमें लगा कि हम अहिंसा और सत्य; ये दो नाम लेते हैं, उनके साथ अपरिग्रह को भी रखना ही चाहिए। वह अध्याहृत है, माना हुआ है। लेकिन उसको अध्याहृत नहीं रखना चाहिए, उसके लिए योजना होनी चाहिए।

अभी क्या हो रहा है? भूमिदान का वातावरण सारे हिन्दुस्तान में भले ही न निर्माण हुआ हो, फिर भी कुछ प्रदेशों में काफी निर्माण हुआ है, ऐसा मानना पड़ेगा। जैसे बिहार है। वहाँ लोगों में भावना काफी निर्माण हुई है। उसके बिना लाखों लोगों का दान सम्भव नहीं होता। लाखों एकड़ भूदान मिला है, उसे छोड़ ही दीजिये। सम्पत्ति-दान भी मिला है, लेकिन वहाँ भी कानून की जिम्मेवारी जिन पर है, वे कानून बनाने में हिचकिचा रहे हैं। कानून के अलावा दूसरी चीज वे करते होते और मान लीजिये भूदान को इन छह महीनों में पूरा करना है, ऐसी भी इच्छा रखते, तब तो हम समझ सकते थे। वैसा विचार वे रखते नहीं, वैसी उम्मीद वे रखते नहीं। यद्यपि भूदान को वे अच्छा समझते हैं, फिर भी उसको चालना देकर चार-छह महीनों में भूदान के जरिये यह मसला हम हल करेंगे, ऐसा कोई कार्यक्रम उन्होंने बनाया नहीं है, और कानून बनाने की जिम्मेवारी उन्होंने अपनी मान ली है, लेकिन उसे बनाने में हिचकिचाते हैं। यह हिचकिचाहट क्यों होती है? वह हिचकिचाहट ऐसों को है, जो कि बोलने में किसी भी क्रान्तिकारी से कम नहीं बोलेंगे, पर प्रत्यक्ष करने में वे नहीं कर रहे हैं। इसका कारण क्या है? कारण यह है कि वह जिनके जरिये होगा, वे सबके सब अपरिग्रही नहीं हैं, बल्कि परिग्रह के सिद्धांत को मानने वाले हैं। परिग्रह को वे सिद्धांत मानते हैं और यह भी मानते हैं कि परिग्रह जितना बढ़े, उतना अच्छा है। सबको परिग्रह हासिल नहीं है, तो उतना बढ़ाना ठीक नहीं है, वह अलग बात है। परन्तु परिग्रह के सिद्धांत को ही मानते हैं और अपने पास जो है, उसे तो छोड़ना नहीं चाहते। उस हालत में हिचकिचाहट होती है। फिर कई बातें उपस्थित करते हैं कि भूमि के लिए ही क्यों लागू किया जाय, सम्पत्ति के लिए क्यों न लागू किया जाय इत्यादि। इस सबका मतलब इतना ही होता है कि वह छोटी चीज जो बन सकती है, वह नहीं बन रही है। भूदान, सम्पत्ति-दान इत्यादि की जो बात है, उनके मूल में अपरिग्रह का सिद्धान्त है, उस तरफ हमको ध्यान देना होगा और कार्यकर्ताओं की अपनी अवस्था में हमें उसका समावेश करना होगा।

आज अण्णासाहब कहने लगे कि कोरापुट में साल भर में वे इस नतीजे पर आये कि शरीर-परिश्रम को जीवन में दाखिल किये बिना आदिवासियों पर असर डालने का या उनके साथ सम्बन्ध बढ़ाने का कोई साधन नहीं है। एक तो उनकी भाषा हम जानते नहीं हैं और भाषा जानेंगे तो भी सिर्फ भाषा से वहाँ ज्यादा कुछ होगा नहीं। लेकिन उनके साथ मिल कर यदि हम परिश्रम करेंगे, तो वही एक तरीका है, जिससे कि हम अच्छे विचार उन्हें दे सकेंगे। यह तो मैंने मान्य ही किया और उसके साथ अपना और एक विचार जोड़ दिया कि गुरु तो हम तब बनेंगे, जब कि पहले शिष्य बनेंगे। उनके जीवन में गुण स्पष्ट ही है। शरीर-परिश्रम का उनका जीवन है। इसलिए शरीर-परिश्रम की आदत हमें डालनी होगी। हमारे कार्यकर्ताओं के सामने अहिंसा, सत्य और अस्तेय; अनेक बातें हैं, लेकिन ये तीन बातें हम रखें, यह जरूरी है और उन पर हम अमल करें।

निष्काम सेवा

हिन्दुस्तान में आज जो आपत्तियाँ हैं, उन आपत्तियों में एक आध्यात्मिक आपत्ति यह है कि निष्काम सेवा मिट गयी है। जो भी सेवा की जायगी, उसका कोई-न-कोई मूल्य अपेक्षित किया जायगा। व्यक्तिगत होगा, या पक्ष के लिए होगा, जिनको कि निरपेक्ष ही माना जायगा। वास्तव में वह निरपेक्षता नहीं होगी। यह पाक्षिक अपेक्षा होने के कारण सकाम ही मानी जायगी। तो, निष्काम सेवा बहुत दुर्लभ है। स्वराज्य के पहले कुछ थी, क्योंकि तब कामना के लिए मौका ही कम था, लेकिन स्वराज्य के बाद वह बात चली गयी। अभी हमने एक व्याख्यान में कहा था कि सारा धार्मिक कार्य हमने धर्म-संस्थाओं को सौंप दिया है और सामाजिक कार्य आदि सब सरकार को सौंप दिया है। इस वास्ते खाना, पीना, सोना इत्यादि जो हमारा नित्य कार्य है, उसके सिवाय और कोई कार्य हमारे लिए रहता ही नहीं है। अब संस्था और सरकार के जरिये जो सेवा होती है, वह कुल की कुल सकाम हो गयी। उसमें निष्काम सेवा नहीं है। इस वास्ते हमको एक ऐसी सेना निर्माण करनी होगी, जो शुद्ध सेवा में विश्वास करती हो और उसमें किसी प्रकार का और कोई हेतु न रहे। इसकी बहुत जरूरत है। ऐसे लोग चाहे थोड़े निकलें, चाहे आज उनकी शक्ति कम हो, परन्तु ऐसे जितने लोगों का संग्रह हम करेंगे, उतना ही हमारा काम फैलेगा।

सकाम सेवकों को सहन करें

कार्यकर्ता की निष्ठा में निष्काम वृत्ति एक आवश्यक अंग होना चाहिए और उसके साथ-साथ उसीका एक पथ्य है कि दूसरे जो असंख्य सकाम सेवा करने वाले होंगे, उनसे अपने को ऊँचा न मानें और उनकी मदद लेते रहें। अगर कोई मनुष्य ऐसा है, जो अपना कोई उद्देश्य सेवा में नहीं रखता है, पर दूसरा कोई खास कामना रख कर सेवा करता है, तो उसे बर्दाश्त नहीं करता तो उसमें भी पूर्ण निष्कामता नहीं। पूर्ण निष्कामता तो वह होगी जो कि अपनी फिक्र करेगा, और बाकी दुनिया में भिन्न-भिन्न कामना रही हैं, यह समझ करके कामना-प्रेरित ही क्यों न हो, अगर सत्कार्य में लोग आते हैं, तो आने दीजिये। उनकी मदद हम लेंगे। उनकी कामना की पूर्ति होती है, तो भी मुझे कोई उज्र नहीं है। ऐसी वृत्ति होनी चाहिए। इन दोनों वृत्तियों को मिला करके ही निष्काम वृत्ति मानी जाय। अगर यह हो, तो असंख्य लोगों का सहयोग हम हासिल करेंगे और तिस पर भी हम किसी कामना में बह नहीं जायेंगे। यह जो निष्कामता का दोहरा अर्थ मैंने रखा, उसका हमारे कार्यकर्ताओं के सामने आदर्श होना चाहिए।

लोकनीति की निष्ठा

मैंने दो बातें कहीं। एक बात मैंने कही है अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह की। उसके बाद निष्काम सेवा की और सकाम वृत्ति सहन करने की। तीसरी बात है लोकनीति की निष्ठा। यह हमारे सेवकों की निष्ठा का एक महत्त्वपूर्ण अंश होना चाहिए। इस बार सर्व-सेवा-संघ ने जो प्रस्ताव किया, वह बहुत ही सुन्दर प्रस्ताव है। ऐसा प्रस्ताव कभी होता है, तो मुझे बड़ा उत्साह आता है, समझाने के लिए कोई चीज मिल जाती है। यह प्रस्ताव चर्चा को उत्तेजना देने वाला प्रस्ताव है। हम अगर वोट नहीं देते हैं, तो क्या नागरिक के कर्तव्य की हानि नहीं होती है? अगर बहुत लोग हमारी बात मानेंगे, तो क्या गलत आदमियों के हाथ में कारोबार नहीं चला जायगा? ऐसे कई प्रश्न आते हैं। उन सब प्रश्नों के बावजूद यह प्रस्ताव हमारे लिए कल्याणकारी है, क्योंकि लोकनीति के विषय में जितना मैं सोच रहा हूँ, उसमें इतना निश्चय होता जाता है कि आज की राजनीति को मान्य करके, उसको छोड़ने के लिए भी जो उसे मान्य करेंगे, वे उसे तोड़ने नहीं पायँगे, क्योंकि तोड़ने के लिए उसके बाहर रहना चाहिए। तोड़ने के खयाल से उसके साथ सम्बन्ध जोड़ने की जो इच्छा होती है, वह अत्यन्त सूक्ष्मतम मोह है। हमारे मन में इस बात की सफाई होनी चाहिए कि अगर हम इससे अलग होंगे, तभी हम उस पर कुछ ज्यादा अंकुश रख सकेंगे।

www.vinoba.in

एक भाई ने हमसे कहा कि 'पक्षीय राजनीति'–सत्ता की राजनीति–में आपकी न पड़ने की इस नीति का परिणाम यह हुआ है कि गलत काम जो दुनिया में हो रहे हैं, उन पर टीका भी नहीं हो रही है। मैंने कहा कि बिलकुल उल्टी बात है। उन पर टीका इसलिए नहीं हो रही है कि लोग पक्षों के अन्दर फँसे हुए हैं। जो बड़ा पक्ष है, वह तो अपने पक्ष की निष्ठा के वास्ते टीका नहीं करता है। जो उसका विरोधी पक्ष है, उसकी टीका की कोई कीमत नहीं होती। जिसकी कीमत हो सकती है, वह टीका नहीं कर सकता, पक्ष के अन्दर पड़ा है और वही पक्ष काम कर रहा है। दूसरा कभी टीका करता है, तो उसकी कीमत नहीं है। टीका तो तभी उज्ज्वल होगी और तभी कारगर होगी, जब वह पक्षातीत होगी और लोकनिष्ठा रख कर ही की जायगी। 'कारगर' इस अर्थ में कि उसका नैतिक परिणाम होगा, चाहे व्यावहारिक परिणाम तत्काल न हो।

अहिंसा हिंसा को सहन करे

हिंसा में अहिंसक मनुष्य को सहन करने की शक्ति नहीं है। वह अहिंसक मनुष्य को सहन नहीं करेगी, पर अहिंसा में हिंसक मनुष्य को सहन करने की शक्ति होनी चाहिए। हिंसक राज्य होगा, तो सम्भव है कि वह अहिंसक लोगों पर ही पाबन्दी रखे, खुले आम बोलने के लिए मौका न दे, मौके पर खतरनाक भी माने और उनकी वाणी रोके, लेकिन अगर अहिंसक राज्य है, तो हिंसा का प्रचार जो भी करना चाहता है उसे प्रचार करने की पूरी आजादी मिलेगी। जितने व्याख्यान देने हैं, जितने लेख लिखने हैं, हिंसा का मंडन करना है, जो ग्रंथ लिखने हैं, सब लिखो। किसी भी ग्रंथ को हमारे राज्य की तरफ से बंधन नहीं होगा। तभी अहिंसा खुलेगी। इसलिए ऐसे जो लोग हैं, जिन्हें हम अपने अहंकार से ही हिंसक मानते हैं, उनसे सम्बन्ध त्यागने की वृत्ति हमारी नहीं होनी चाहिए। हम अपने काम में सबका सहयोग लेने के लिए राजी हैं।

समुद्र किसी भी नाले को स्वीकार करने से इन्कार नहीं करता। वह यह नहीं कहता कि शुद्ध नदी ही इसमें आये और गंदे पानी वाला नाला इसमें न आये। तो हम अगर इसे जन-आन्दोलन मानते हैं, अहिंसा का आन्दोलन मानते हैं, तो अहिंसा में सबको पचा लेने की शक्ति होनी चाहिए। समुद्र नाले को अपना खारा रूप देता है। याने अपना रूप देने के लिए उसे स्वीकार करता है। उसमें हिम्मत है, वह कहता है कि अगर तू आयेगा तो मेरे रूप में क्या फर्क पड़ेगा, अपना ही रूप मैं तुझे दूँगा। इसलिए अहिंसा में यह हिम्मत होनी चाहिए कि कोई भी आये, कोई हर्ज नहीं। मैंने एक मिसाल दी थी कि हमारी पटरी सतोगुण की, अहिंसा की है, तो ठीक है, फिर बीच में डिब्बे, इंजिन वगैरा चाहे जो हों, उसमें रजोगुण आये, तमोगुण आये, हमें चिंता नहीं। लेकिन उस पटरी में कहीं दोष नहीं होना चाहिए, वह ठीक दिशा में जानी चाहिए। सब लोगों का सहयोग हमें लेना है, उन्हें मौका देना है। मान लीजिये कि हिन्दुस्तान की मुख्य पार्टी का अगर मैं मुखिया होता, तो मैं जाहिर कर देता कि मैं सब पक्षों के अच्छे लोगों का सहयोग चाहता हूँ। अच्छे लोगों में मैं एक ही विशेषण लगाऊँगा 'इन्टीग्रिटी'(सचाई),जो ऐसे खरीदे न जानेवाले लोग होंगे, चाहे किसी पार्टी के हों, ऐसे कुछ लोगों को पार्लमेन्ट में आने दूँगा और कहूँगा कि उनके खिलाफ किसी को नहीं खड़ा करना है। मैं तो केवल एक प्रकट चिंतन कर रहा हूँ कि हमारी तो कोई मिनिस्ट्री है नहीं, परन्तु यह अपना एक कार्य है, उस कार्य में भिन्न-भिन्न पक्षों के लोग, जो इस कार्य को सचाई से मानते होंगे, आना चाहते हों, चाहे उनके यकीदे याने माने हुए विश्वास, हिंसा के हों अहिंसा के हों, ईश्वर-निष्ठा के हों, नास्तिकता के हों, जैसे भी हों, उन सबको हम मंजूर करेंगे, यह हमारी वृत्ति होनी चाहिए। हमारे आन्दोलन के मूल सेवक कोई दस-बीस नहीं होने चाहिए, बल्कि लाखों की तादाद में होने चाहिए, वे पूर्णतया लोकनीति मानने वाले होने चाहिए। अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह की मूलभूत दृष्टि, निष्काम वृत्ति रख कर सकाम लोगों का सहयोग हासिल करने की वृत्ति, लोकनीति की निष्ठा रख कर सबका सम्मेलन अपने साथ करने की तैयारी, ऐसी त्रिविध योग्यता हमारे कार्यकर्ताओं में होनी चाहिए। हमें विश्वास है कि यद्यपि हमने एक ऐसा चित्र खींचा कि जिसमें ऐसा दीख पड़ता है कि मानों अहिंसा के लिए कोई मौका ही न हो, उसका भी उपाय मिलता है और हमारा दर्शन यह है कि यद्यपि यह सारा हिंसा का है, तो भी हिन्दुस्तान में अहिंसा के लिए बहुत ही आदर है।*

*पलनी में हुई सर्व-सेवा-संघ की बैठक में किये गये भाषण से, ता० २०-११-'५६।

सुनहला खतरा

(प्रबोध चोकसी)

अखबार में पढ़ा कि श्री लालबहादुर शास्त्री ने पांडेचेरी के बंदरगाह पर एक नये घाट (pier) का उद्घाटन करते हुए कहा: "इस वृद्धि से मद्रास एवं विझगम् के बंदरगाहों की पूर्ति होगी। ये दो बड़े बंदरगाह अपनी आयोजित शक्ति के दुगुने से भी अधिक माल का यातायात करते हैं।" आगे चल कर उन्होंने यह भी घोषित किया कि राष्ट्रीय आयोजन के सिलसिले में आइंदा माल का आवागमन बहुत बढ़ेगा और इस कारण माल ढोने के मसले को असाधारण अहमियत हासिल हो गयी है।

श्री गोपाल कृष्ण मल्लिक ('भूदान-यज्ञ' २३ नवंबर' ५६ के लेख द्वारा) श्री फिरोज गांधी की इस खोजबीन पर ध्यान दिलाते हैं कि इस यंत्रयुग में भी बैलगाड़ी हमारे यहाँ बढ़ रही है। पहली प्रतिक्रिया तो चित्त पर अच्छी हुई कि चलो, स्वराज्य का उदय हो गया है, तो यह चहल-पहल भी शुरू हो गयी, जैसे पौ फटते ही पंछी को होती है। लेकिन फिर दूसरा विचार आया। उस बैलगाड़ीवाली खबर ने कुछ बेचैन किया। आखिर यह 'ट्राफिक' क्यों बढ़ रहा है? क्या उससे देहाती माल की सुख-समृद्धि बढ़ रही है? या फिर शोषण का यंत्र और भी तेजी से देहात के रक्त को बहा ले जा रहा है? केवल गतिवृद्धि से खुश होने वाली बच्चों की बुद्धि के दिन अब लद गये हैं। गति में प्रगति है या अधोगति, इसका अंदाजा लगाने वाली युवा-बुद्धि को जमाना ललकार रहा है।

देहाती पेशों को तोड़ने वाले कल-कारखानों की खराबी तो हम भली-भाँति जानते हैं और तोते की तरह रट भी लेते हैं आये दिन, परंतु शोषणमूलक समाज-रचना की छत्रछाया में निर्दोष प्रजा के रूप में और कभी-कभी तो शोषण के किंकर-स्वरूप रहने वाले कुछ ग्रामीण धंधे और सहयोगी प्रवृत्तियाँ आदि न सिर्फ हमारी भोली-भाली सहानुभूति प्राप्त कर लेती हैं, बल्कि कई बार आशीर्वाद और सहायता भी हासिल कर लेती हैं।

आणंद (जिला खेड़ा-गुजरात) में एक अद्यतन डेयरी ने डेरा डाला है। शायद एशिया में उसका कुछ नंबर लगता है। क्रुश्चेव को भी दिखाने के लिए लाया गया था और वह खेड़ा के किसानों की सहयोगी संस्था है। दूध से पाश्चराइज्ड मक्खन बना कर अब वह 'पॉल्सन' की टक्कर में अपना 'सहयोगी' मक्खन शहरों के बाजारों में और अखबार के पन्नों पर गुरूर से पेश कर रही है और इधर खेड़ा की एक छोटी-सी जगह से एक संवाददाता अपने अखबार को खबर भेजता है : 'देहातों से सब दूध आणंद की डेयरी में जा रहा है। पहले तो यहाँ घी बनता था, तो किसान के बच्चों को छाछ मिलती थी। अब न उनके लिए छाछ रही है, न मेहमदाबाद के छोटे व्यापारी के लिए घी का व्यापार!"

भारत में को-आपरेटिव कॉमनवेल्थ और सहयोग-प्रधान समाजवादी समाज-रचना के सपने हम लोग देख रहे हैं। यहाँ सहयोग भी है और वह भी देहात के किसानों के नाम पर! सिर्फ बैलगाड़ी के नीचे रबड़ के पहिये ही क्यों, 'हार्स-पावर' ही लग गया है! गाड़ी को बैल खींचता है या उससे ढकेला जा रहा है, यह मत पूछिये! इतनी 'प्रगति' के बाद अब देहात की शानोशौकत में भला क्या कमी रह सकती है? आणंद से रेलगाड़ी में उतरने वाले असंख्य यात्री गवाही देंगे कि उस शानदार डेयरी की हवालात को देख कर आँखे चौंधिया जाती हैं। शान तो बेशक बढ़ गयी है। लेकिन जान भी बढ़ रही है क्या?

समाजवाद, सहयोग और ग्रामोद्योग को भी पूँजीवादी रचना अपने यंत्र के पहिये बना ले सकता है, बना रहा है। यूरोप-अमेरिका में 'लिमिटेड' और 'इन्कॉर्पोरेटेड' के उपनयन-संस्कार द्वारा पूँजीवाद सामूहिकता से संपन्न हुआ, यंत्र और बाजार के विशाल आकार पर काबू पाने के लिए। रूस में राज्यसंस्था से विवाह करके वह सत्तासंपन्न भी हुआ है, अपनी संतानों के-से वर्गों के संघर्ष पर काबू रखने के निमित्त पूँजीवाद और राज्यवाद, दोनों ने विश्व इतिहास में अभूतपूर्व, अश्रुतपूर्व सामर्थ्य प्राप्त कर ली है। अब भारत में 'समाजवाद' के वानप्रस्थाश्रम का नाटक उस दंपति ने रचा है, समाजदेव की कृपा प्राप्त करने के लिए। इस 'नाटक' का इतमीनान से स्वागत करके उसे वस्तुगत सत्य में परिणत कर देने का और पूँजीवाद एवं राज्यवाद के शोषण-शासनस्वरूप पापों को निर्मूल करने का आवाहन सर्वोदय को जमाना दे रहा है।

---

www.vinoba.in

एक चित्र :

तमिलनाड की क्रांति-यात्रा से

(मीरा व्यास)

पलनी में भूदान-गंगा को जन-महासमुद्र में विलीन करके कार्यकर्ताओं को तंत्रमुक्त बना कर मंत्रयुक्त चिंतन के लिए प्रेरित करके, निधिमुक्त बना कर राम-संनिधि में छोड़ कर पू० विनोबाजी की यात्रा पूर्ववत् चल रही है। आकाश में वही सूर्य और वही चाँद-सितारे रोज चमकते हैं, परंतु इस महाज्ञानी के चिदाकाश में सदा नित्य निरंतर नया ज्ञानोदय होता है। उन ज्ञान-किरणों में प्रतिदिन स्नान करना, यही यात्रियों का जीवन है।

ता. ३ दिसम्बर को हमारा पड़ाव पट्टीवीरन्पट्टी में था। सबके स्वागत के लिए आयी हुई जनता ने पूर्ण-कुंभ, कुंकुम और गुलाल से विनोबाजी का स्वागत किया। आज स्वागत करने वालों में हमें एक परिचित मुख दिखायी दिया। वह हमारी कृष्णम्मा थीं। आश्चर्यानन्द से भरी हुई हमारी आँखों से कृष्णम्मा ने कहा, "यहाँ से तीन-चार फर्लांग पर ही मेरा गाँव है।" हम सब बोल उठे, "अच्छा, तब तो हम लोग जरूर वहाँ जायेंगे।" "हाँ, जरूर आइये और देखिये कि तमिलनाड के संयोजक ने कैसी लड़की को स्वीकार किया है," कृष्णम्मा बोलीं। प्रत्युत्तर ने दिल की दुनिया में उठे हुए तूफान की झाँकी करायी। कृष्णम्मा तमिलनाड के संयोजक श्री जगन्नाथन्जी की धर्मपत्नी हैं।

छोटी-सी मदुरा नदी के किनारे बसा हुआ छोटा-सा गाँव। इधर-उधर बिखरी हुई टूटी-फूटी बीस-पचीस झोंपड़ियाँ। बिखरे बालों को मुँह पर से हटाने की लापरवाही वाली, गँवार, धूल में खेलती-कूदती, फटे कपड़े पहनी हुई सखियों के साथ उनकी-सी मैं भी उसी दुनिया में जा रही थी। हरिजन कन्या! वही अपमानित, उपेक्षित हालत जो भारत के असंख्य हरिजनों की थी, वह हमारी थी। वही गरीबी, वही मुसीबतें, वही अवहेलना और वही अपमान। उतने में पिताजी की मृत्यु ने जीवन में और अधिक कठिनाई ला दी। कृष्णम्मा के सामने मुसीबतों को झेलती हुई, कठिनाइयों को पार करती हुई, दिन-रात पसीना बहाती हुई माँ की मूर्ति आ खड़ी हो गयी। गँवार हरिजन-कन्या अब शिक्षित, सभ्य कालेज-कन्या बन चुकी थी। माँ के सपनों को साकार करते हुए कृष्णम्मा ने बी. ए. की परीक्षा पास की। कृष्णम्मा के सामने अब नया ही संसार आ खड़ा था।

जिस मिट्टी में वह खेली थी, उसी मिट्टी की सेवा में समर्पित होने का भाग लिखा जा चुका था। जगन्नाथन्जी हरिजन-सेवक थे। उन्होंने हरिजन-सेवा में जीवन बिताने का निश्चय कर लिया था। कृष्णम्मा के साथ शादी करके जगन्नाथन्जी ने समाज के सामने जाति-भेद तोड़ने का एक आदर्श रख दिया। इस शादी ने कृष्णम्मा के जीवन को बदल दिया। सेवा-व्रती पति ने जीवन स्वप्न का रंग ही बदल डाला और वह खुद भी सेवा-मयी बन चुकी। आज वह सोच रही होगी—"कहाँ की मैं, कहाँ मेरा जन्म, मेरा बचपन, कहाँ वह दुःख पीड़ित जीवन, कहाँ उस जीवन का परिवर्तन जगन्नाथन्जी का आगमन और भूदान में जुट पड़ना! आज मेरी झोंपड़ी में विनोबाजी आ रहे हैं। मुझ दुखिया का कितना अनुपम भाग्य!"

गाँव दरिद्र, पर गाँववाले दरिद्री नहीं

"अय्यन्कोट्टे" गाँव कृष्णम्मा के पुण्य-प्रताप से आज संत-चरण की पद-धूलि से पावन होने जा रहा था। गाँव तो छोटा-सा है। एक हजार जन-संख्या का गाँव है। उसमें २०० परिवार हरिजनों के हैं और ४० परिवार दूसरी जातिवालों के। गाँव में कुल ७० एकड़ जमीन है। उसमें से ३० एकड़ गाँव के ही दूसरे लोगों की है, परंतु बाकी की हरिजनों की जमीन नजदीक के "पट्टीवीरनपट्टी" गाँव के बड़े-बड़े साहूकारों के पास चली गयी है। खेतों में या नजदीक के शहरों में मजदूरी करके हरिजन अपना जीवन चलाते हैं। अत्यंत दरिद्र गाँव है, परंतु गाँव वाले दरिद्री नहीं! आज विनोबाजी आने वाले हैं, यह सुनते ही मजदूरी पर न जाने का उन्होंने तय कर लिया था। गरीबों की एक दिन की मजदूरी याने पूरे दिन का फाका। परंतु पुनीत-दर्शन की अभिलाषा ने खाली पेट के फाके को एकादशी का वेष पहना दिया।

दोपहर में तीन बजे कृष्णम्मा के गाँव में जाने के लिए बाबा निकल पड़े। गाँव के नजदीक ही छोटी-सी मदुरा नदी बहती है। सुना कि प्रवाह ज्यादा था, परंतु विनोबाजी आने वाले थे, इसलिए आगे कहीं उसे रोक दिया था। छोटी-सी मदुरा नदी को पार करते ही गाँव वालों ने बाबा का पत्रं, पुष्पं, फलं, तोयम् से स्वागत किया। पू० बाबा को सभा-स्थान पर ले जा रहे थे, परंतु बाबा के पाँव आगे ही बढ़ते गये। बाबा कृष्णम्मा के घर पर जा रहे थे। आम्रपल्लवों से सजायी हुई छोटी-सी घास-फूस की झोंपड़ी दरिद्रता की प्रतीक-सी लगती थी। प्रवेशद्वार पर ही कृष्णम्मा की माताजी ने प्रेमपूर्ण स्वागत किया। बाबा ने माताजी को नमस्कार किया। छोटे-से दो कमरों में इधर-उधर बिखरा बिखराया सामान परिवार की हालत दिखा रहा था। छोटे-से बरामदे में बालकृष्ण की एक सुंदर मूर्ति रखी थी। व्रजकिशोर की मनोहर आखें हँस रही थीं। उत्तम कुल में जन्म पाकर भी कृष्ण ने बाल-गोपालों की सेवा की। उसी प्रेरणा-मूर्ति से कृष्णम्मा ने अपने जीवन में भर-भरके प्रेरणा पायी होगी। बापू ने भी तो यही कहा था कि मैं भंगी हूँ। इन दो महान् सेवकों के जीवन से कृष्णम्मा अपने छोटे-से जीवन को मूर्त-रूप दे रही हैं। वह मूर्ति के समक्ष ही गद्गद खड़ी थी। निकट ही पंच आरती थी। बाबा का स्वागत करना, नमस्कार करना, बोलना वह सारा भूल कर स्तब्ध हो गयी थी। दर्शनोत्सुक ग्रामजनों को वाणी-प्रसाद भी मिल गया। बाबा ने कहा, "आज यहाँ हम कृष्णम्मा के प्रेम के कारण आये हैं। आप सब लोग जानते हैं कि कृष्णम्मा की माँ ने अनेक मुसीबतों का सामना करके, मेहनत-मजदूरी करते हुए लड़कों को तालीम दिलायी है। बहुत-से लोग तालीम पाकर नौकरी ढूँढ़ते हैं, परंतु कृष्णम्मा ने वैसा नहीं किया। वह अगर चाहती तो उसको अच्छी नौकरी मिल सकती थी, परंतु उसने अपना समय भूदान में लगाया। यह आपके सामने एक बहुत बड़ी मिसाल है। आपके सामने दूसरा उदाहरण यह है कि जगन्नाथन्जी ने उसे स्वीकार किया और जातिभेद तोड़ दिया। वे भी अब भूदान के काम में लगे हुए हैं। भूदान के काम के साथ-साथ हमने जातिभेद तोड़ने का काम भी जोड़ दिया है। पैसे और प्रतिष्ठा से कोई ऊँचा नहीं, कोई नीच नहीं। हम जमीन सबकी करना चाहते हैं, संपत्ति भी समाज की बनाना चाहते हैं, जातिभेद को समाप्त करना चाहते हैं। इस दम्पति द्वारा ये सब कार्य हो रहे हैं। हम अभी इनका घर देखने गये थे। वहाँ हमें परमेश्वर का दर्शन हुआ। वहाँ भगवान् श्रीकृष्ण की मूर्ति रखी थी। उस कृष्ण परमात्मा का ही काम कृष्णम्मा चला रही है। कृष्ण परमात्मा ने स्त्री-पुरुष का भेद मिटा दिया, ऊँच-नीच का भेद मिटा दिया और बिलकुल किसानों के साथ उन्होंने काम किया, गाय-घोड़े की सेवा की। वही चित्र हमने वहाँ देखा। भूदान का जातिभेद तोड़ने का काम भगवान् कृष्ण की प्रेरणा है। कृष्ण ने यह काम ५ हजार साल पहले किया। वे खुद एक बड़े कुल में पैदा हुए थे, लेकिन वे बालगोपालों के साथ रहे और आज भी दुनिया में गोपालकृष्ण के नाम से मशहूर हैं। उन्होंने बड़े-बड़े राजाओं को हराया, लेकिन अपने हाथ में राज्य नहीं लिया। दूसरे के हाथ में राज्य सौंप कर वे स्वयं सेवक ही रहे। यही काम कृष्णम्मा कर रही है। आपको उसमें मदद देनी है। इस गाँव में किसी प्रकार का ऊँच-नीच भेद नहीं रहना चाहिए। छोटा-सा गाँव है। जो कुछ जमीन, संपत्ति है, वह सबके काममें लगा देनी चाहिए।"

गाँव को आदेश मिल चुका था। बाबा बिदा ले रहे थे। कृष्णम्मा की माताजी ने हमारे लिए पायसम् (खीर) तैयार की थी। मक्खन-चोर गोपालकृष्ण की मूर्ति के सामने हम लोगों ने पायसम् से मुँह मीठा किया और माताजी से हमने अपनी टूटी-फूटी तमिल में कुशल-समाचार की बातें कीं।

लौटते समय पता चला कि जिस गाँव की जमीन के मालिक, जो हमारे पड़ाव के गाँव में रहते हैं, नहीं चाहते थे कि विनोबाजी कृष्णम्मा के गाँव में जाँय। कारण जाहिर था और यहाँ इस छोटे से गाँव के लोगों ने विनोबाजी के दर्शन-पिपासा के कारण एक दिन की मजदूरी गँवायी थी।

जमीन छीन लेने वाले ही चोर

शाम के प्रार्थना-प्रवचन में उसका जिक्र करते हुए बाबा ने कहा : "आज हम कृष्णम्मा के गाँव में गये थे। वह हरिजनों का गाँव है। कर्जे के कारण हरिजनों की जमीन छीन ली गयी है। कृष्णम्मा ने भूदान का काम उठाया है, तो वह इस काम के जरिये हरिजनों को जमीन दिलवा सकती है। लेकिन यह काम अकेली कृष्णम्मा का नहीं है। वह स्वयं हरिजन है। हरिजनों को ऊपर उठाने का काम हम लोग का है, जो हरिजन नहीं हैं। तब परस्पर प्रेम बढ़ेगा। आज उन हरिजनों की हालत बहुत बुरी है। दुःख के कारण वे चोरी आदि करते हैं, तो लोग उनसे घृणा करते हैं। परंतु वे चोर कैसे हुए? उनके हाथ से जब जमीन छीनी गयी, घर में बालबच्चों के पोषण का सवाल उठा, तब इन्होंने चोरी की। जिन लोगों ने जमीन छीन ली, उन लोगों ने चोरी नहीं की, तो क्या किया? यह ठीक है कि एक चोर

www.vinoba.in

कानून के शिकंजे में गया और उसे सजा हुई; दूसरे को ऐसा कुछ नहीं हुआ, बल्कि दुनिया में वह साहूकार माना गया। आज हरिजनों की जमीन उनके पास है। पैसे, बड़े-बड़े बंगले उनके पास हैं, बाबा का स्वागत भी वे ही करते हैं, बाबा को खिलाते-पिलाते भी वे ही हैं, बाबा का आशीर्वचन प्राप्त करने के लिए भी वे ही लोग आते हैं। परंतु बाबा का आशीर्वचन उनको फलेगा नहीं; क्योंकि जब तक वे अपना चोरी का धंधा नहीं छोड़ेंगे, तब तक उन्हें आशीर्वाद फलेगा नहीं। जब तक हम एक-दूसरे को खाते रहेंगे, तब तक जंगल के जानवर और हममें कोई फर्क नहीं पड़ेगा। परंतु यह सुखी होने का रास्ता नहीं है। हम सुखी तब बनेंगे, जब हम अपने दिल उदार बनायेंगे, सारे गाँव को अपना परिवार समझेंगे, गरीब लोगों के दुख की जिम्मेवारी उठायेंगे। अपनी संपत्ति, भूमि का एक हिस्सा देंगे और उन्हें अपनी बुद्धि और अकल देकर अपने पाँव पर खड़ा करेंगे। तभी समाज में भी सुधार होगा।"

ग्रामराज की एक झाँकी

(राममूर्त्ति, खादीग्राम)

सर्वोदयवालों की अभिलाषा यही है कि जिस तरह इस देश से गुलामी का अंत हुआ, उसी तरह गरीबी का अंत भी इस देश से हो जाय। सर्वोदय का यह विचार है कि जब तक सत्ता मिटेगी नहीं, तब तक सेवा होगी नहीं। दूसरी ओर राजनैतिक दलवाले सोचते हैं कि सत्ता में जाने के बाद ही सेवा हो सकती है। हर गाँव के लोग यदि अपने भोजन, दवा-दारू, अन्न, वस्त्र तथा निवास के लिए गाँवों में प्रबन्ध कर लें, तो पटना और दिल्ली के शासन के बिना भी काम बहुत आसानी से चल सकता है। आज हमारे समाज में कोई भी व्यक्ति सुखी नहीं है, चाहे वह डाक्टर हो, वकील हो, व्यापारी हो, किसान हो या नौजवान हो। इसका कारण क्या है? किसान यद्यपि पैदा करता है, फिर भी वह सुखी नहीं है? इसका कारण हमें ढूंढ़ना होगा। सरदार वल्लभभाई पटेल ने एक बार कहा था कि जब भारत के गरीबों के घर एक रोटी के स्थान पर दो रोटी बनने लगें, तो हमें समझना चाहिए कि स्वराज्य आ गया। स्वराज्य का नाम हम 'ग्रामराज' रखते हैं।

आज गाँव के लोग अपनी आवश्यकता की सारी चीजें गाँव के बाहर से मँगाते हैं और उसी में सारा पैसा बाहर चला जाता है। हिन्दुस्तान में हर वस्तु का आज मालिक है—जैसे भूमि का, व्यापार का। मालिकी का अंत करने का विचार सर्वोदय का विचार है तथा यही ग्रामराज का विचार है। गाँवों में जब तक अन्याय और जुर्म चल रहा है, तब तक हम स्वराज्य नहीं मानेंगे। आज गाँव के लोग जो कुछ भी पैदा करते हैं, वह उनके घर नहीं रहता। उसमें से कुछ व्यापारी के घर चला जाता है, कुछ सरकार के खजाने में, कुछ स्कूल में और उससे जो बच जाता है, वह गाँववालों के लिए बच जाता है। विनोबाजी चाहते हैं कि गाँव के लोग एक परिवार की तरह रहें।

हमारे समाज में आज बहुत झगड़े चलते हैं। आखिर इतने झगड़े समाज में क्यों चलते हैं? सारे झगड़े संपत्ति के कारण होते हैं और वह भी इसलिए कि उस पर कुछ खास लोगों का अधिकार रहता है। विनोबाजी चाहते हैं कि गाँव के लोगों को हिसाब लगा लेना चाहिए कि हमें इतना अन्न चाहिए और इतनी रूई आदि। उसी हिसाब से खेती करनी चाहिए। गाँव के लोगों को यह भी निश्चय करना चाहिए कि हमारे गाँव में भूमिहीन कोई नहीं रहेगा, जमीन का मालिक भी कोई नहीं रहेगा। इस ढंग से गाँव के लोग सारे झगड़े मिटा सकते हैं। हर गाँव में यदि चरखा चलने लगे, तो कपड़े के मामले में हर गाँव आसानी से स्वावलंबी हो सकता है। हर गाँव की अपनी एक दूकान होगी, जहाँ गाँव के सारे लोग अनाज बेचेंगे। उससे किसानों को उतना नुकसान नहीं होगा, जितना कि व्यापारी के हाथ बेचने से होता है। यदि रुपये में बारह आना कामों के लिए गाँववाले स्वावलंबी हो जाय, तो वे सरकार से आसानी से कह सकते हैं कि इतनी बातों में हम स्वावलंबी हैं, उसी हालत में टैक्स नहीं भी दे सकते हैं। यही ग्रामराज का चित्र है। हर गाँव में ग्रामोदय-समिति का निर्माण होना चाहिए। इसका मुख्य काम होगा प्रत्येक गाँव में 'धर्मगोला' खोलना। मन में एक सेर के हिसाब से फसल के समय ग्रामोदय-समिति को वसूल करना चाहिए। बीज के रूप में गाँव के गरीबों की सहायता इससे की जा सकती है। *

* गया जिले के अन्छा ग्राम में हुए ग्रामराज-सम्मेलन में ४ नवंबर ५६ को किये भाषण से।

कोरापुट : ग्रामनियोजन की ओर

जब तक कि छोटे-छोटे टुकड़ों में जमीन मिला करती थी, तब तक ग्रामीण अर्थव्यवस्था के संबंध में किसी प्रकार की निश्चित परिकल्पना का भाव हमारे मन में उदय नहीं हो पाता था, किंतु ग्रामदान-आंदोलन ने इसका द्वार मुक्त कर दिया और सर्वोदय-सिद्धांतों के आधार पर गाँवों की अर्थ-व्यवस्था संबंधी अपनी धारणाओं को मूर्त्त रूप देने का सुअवसर हमें उपलब्ध हुआ। भूदान-आंदोलन के प्रारंभिक दिनों में सर्वोदय-सिद्धान्त को जहाँ हम विशेष रूप से कार्यान्वित कर पाने में कठिनाई का अनुभव कर रहे थे, वहाँ ग्रामदान की अवस्था आ जाने के बाद गाँवों के साधन और सामुदायिक जीवन के संबंध में हमारे सामने बहुत से तथ्य स्पष्ट हो गये। समाज का बहुत ही पिछड़ा वर्ग ग्रामदान-आंदोलन के बाद प्रमुख रूप से सामने आ गया और समाजवादी ढाँचा प्रस्तुत करके तथा भूमि के उचित वितरण के माध्यम से लोकतांत्रिक अर्थव्यवस्था की स्थापना करके उसने उत्पादन के साधनों का ऐसा उत्तम उपयोग किया कि जिसे देख कर चकित हो जाना पड़ता है।

जैसे-जैसे लोगों की अवस्था और उनकी आर्थिक स्थिति का हमें विशेष ज्ञान होता जाता है, वैसे-वैसे हमारी पूर्वधारणाएँ मिटती जाती हैं। डॉ. जो. कॉ. कुमारप्पा ने कुछ समय पूर्व सुझाव दिया था कि सर्वोदयी कार्यकर्ताओं के शिक्षण के उद्देश्य से कृषिकार्यों के व्यावहारिक शिक्षण की व्यवस्था की जाय। आज हम इस अवस्था में पहुँच गये हैं कि अपने कार्यकर्ताओं को कृषि की व्यावहारिक शिक्षा दे सकें। निश्चय ही यह हमारी प्रगति का सूचक है। इस दिशा में अब हमें एक कदम और बढ़ाना है, और वह है—सर्वोदय की पद्धति से यंत्र-प्रयोग के शिक्षण की व्यवस्था। अब तक उद्योग और पूँजी के विकास का आधार यंत्र-विद्या रही है, किन्तु अब बड़े-बड़े कारखानों का त्याग करके यह यंत्र विद्या कोरापुट के जंगली और पहाड़ी क्षेत्रों में लघुसिंचाई-योजनाओं, सुधरे औजारों और विकेंद्रित उत्पादन के रूप में प्रकट हुई है।

कोरापुट जिले में नवंबर माह में और ५६ गाँव ग्रामदान में मिले। उड़ीसा में अब तक कुल १२५२ ग्रामदान मिल चुके हैं।

किसी अर्थशास्त्री ने भूदान या ग्रामदान की बात कभी नहीं सोची थी! अतः हमारे सामने स्वतंत्र मार्ग-निर्धारण का ही उपाय रह गया है। इस महत्त्वपूर्ण कार्य को अग्रसर करने के लिए तथा अपना पथ आप ही निर्माण करने के लिए इस समय हमारे पास विविध सामाजिक और राजनीतिक संगठनों, सरकारी संस्थाओं, विश्वविद्यालयों तथा अनेक आश्रमों से युवकों की बहुत बड़ी संख्या नित्य आती रहती हैं और उनके ही सहयोग से हमें यह सारा कार्य करना है।

शोषकों का कठोर पंजा ढीला पड़ रहा है। जनता ने स्वेच्छा से पारस्परिक सहयोग की दिशा में जो प्रगति की है, उससे सामुदायिक प्रयत्नों का स्वप्न सत्य सिद्ध होता जा रहा है और ऐसा प्रतीत होता है कि उद्योग-धंधे और वाणिज्य-व्यवसाय के संबंध में समाजवादी आदर्श को लेकर चलने वाली हमारी अर्थव्यवस्था शीघ्र ही निश्चित रूप ग्रहण करेगी।

हम यह कह सकते हैं कि समाजवादी नियोजन की दृष्टि से कोरापुट को प्रयोग-केन्द्र माना जा सकता है, जहाँ प्रत्येक सिद्धांत का परीक्षण और प्रयोग ९०० गाँवों के इस विस्तृत भूभाग में किया जा सकता है और तब उसे भारत के पाँच लाख गाँवों में भी प्रचलित किया जा सकता है। इस स्थान की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह विस्तृत होते हुए भी एकरूप है, फिर भी ग्रामीण-जीवन का कोई अंग इस क्षेत्र में अछूता नहीं रह जाता है।

यहाँ सामुदायिक जीवन की जो प्रणाली आरंभ की गयी है, उनमें सबका सहयोग और उस सहयोग के आधार पर ही नवनिर्माण की गाड़ी आगे बढ़ रही है। इस क्षेत्र के सब निवासी एक-दूसरे के सहयोग से आगे बढ़ रहे हैं; कोई किसी के कंधे पर चढ़ कर आगे नहीं जा रहा है। आधुनिक सभ्यता के दोष यहाँ के सामाजिक जीवन में प्रवेश नहीं पाते। संत के आशीर्वाद और उनकी प्रेरणा से इस क्षेत्र के निवासी अपनी प्रकृत अवस्था प्राप्त करके आगे बढ़ते जा रहे हैं। संगठन संबंधी समस्याएँ पहले से हल कर ली जा चुकी हैं और कार्यकर्ताओं को उपयुक्त स्थानों पर नियोजित किया जा चुका है। अतः अभाव से विपुलता की ओर और अज्ञान तथा पिछड़ेपन से ज्ञान और प्रगति की ओर कदम बढ़ रहे हैं।

(अंग्रेजी 'ग्रामदान' से)

---

www.vinoba.in

डॉ० अम्बेडकर को श्रद्धांजलि !

आज खबर मिली है कि डॉ० अंबेडकर का स्वर्गवास हुआ है। वे हरिजनों के बड़े नेता और बड़े सेवक थे। हम चाहते ही नहीं कि इसके आगे दुनिया में कोई हरिजन रहे। हम यह भेद ही मिटाना चाहते हैं। परन्तु जब तक यह भेद नहीं मिटा है, तब तक जिन्होंने हरिजनों की सेवा का काम किया, उनका उपकार हम निरंतर स्मरण करते रहेंगे। जब हरिजन-परिजन यह भेद ही मिट जायेगा, तब हम किसीको हरिजन-नेता के तौर पर याद नहीं करेंगे, बल्कि देश का ही नेता समझेंगे। डॉ० अंबेडकर हृदय से देश के ही नेता थे। उनके मन में किसीके लिए कोई द्वेष नहीं था। परन्तु हिंदुस्तान में हरिजनों के साथ बहुत बुरा बर्ताव हुआ, इसके वास्ते उनके मन में चिढ़ थी। परन्तु उनके हृदय में यही खयाल था कि सबका भला हो, सबकी उन्नति हो और उन्होंने जाहिर भी किया था कि इसके आगे वे सारे देश को भगवान् बुद्ध का पैगाम देंगे। ऐसा शख्स भगवान् के पास चला गया, ऐसी खबर मिली। आज की अपनी प्रार्थना में हम उनके लिए शांति की कामना करेंगे।

(देवदानपट्टी, मदुरा, ६–१२–५६) —विनोबा

दलित मानवता के सत्त्व की ज्योति

अखबारों में यह समाचार निकला है कि डॉक्टर बाबा साहब अम्बेडकर की श्मशान-यात्रा देख कर महात्मा गांधी की श्मशान-यात्रा की याद आये बिना नहीं रहती थी। इसका कारण स्पष्ट है। जिस समाज में जातीयता और अस्पृश्यता, सामाजिक सम्मान और प्रतिष्ठा के आधार हैं, उस समाज में दलित और पीड़ित मानव की आत्म-मर्यादा अम्बेडकर की विभूति में प्रज्वलित हो उठी। अम्बेडकर की विभूति में दिव्य जोति भी थी और प्रखर तत्त्व भी था, दलितों के स्वाभिमान की उज्ज्वल तेजस्विता थी और अपमानित मानवता के तीव्र प्रक्षोभ तथा प्रकोप की प्रखर दाहकता भी थी। अस्पृश्यता और जाति-भेद के कारण जो आघात उनको जीवन भर सहने पड़े, उन आघातों के व्रण और क्षत उनके भव्य व्यक्तित्व पर और भी स्पष्ट दिखायी देते थे। अम्बेडकर स्वाभिमान, चुनौती और विद्रोह की प्रतिमूर्ति थे। उनमें उत्पीड़ित मानवता, जाग्रत आत्म-गौरव, समाज के प्रतिष्ठित स्वार्थों को चुनौती देने का अदम्य साहस और अन्याय के विरुद्ध सतत् संघर्ष करने की युयुत्सु वीरता एकत्र थी। इसलिए अपने अनेक उत्कृष्ट गुणों का उपयोग उन्हें तीव्र प्रतिकार के लिए ही करना पड़ा। अम्बेडकर में विधायक प्रतिभा उच्च कोटि की थी, यह कौन नहीं जानता ? संविधान-परिषद् में जिन्होंने उनके विशद् विवेचनात्मक तथा सूक्ष्म पृथक्करणात्मक उद्बोधक भाषण सुने होंगे, वे उनकी प्रतिभा की दमक कभी नहीं भूल सकते। संविधान में अस्पृश्यता निषिद्ध करार दी गयी। परन्तु उसके बाद भी हिन्दू समाज में जाति-भेद और अस्पृश्यता एक आसुरी वास्तविकता के रूप में बनी रही। अम्बेडकर को धर्म-परिवर्तन का मार्ग लेना पड़ा, यह हिन्दू-समाज की संकीर्ण और व्यावर्तक वृत्ति की मानव-जाति के इतिहास द्वारा की गयी क्रियात्मक आलोचना है।

भारतीय संविधान के प्रमुख शिल्पकार, हिन्दू कोड-विधेयक के आद्य प्रवर्तक, पिछड़ी हुई और कुचली हुई मानवता के सत्त्व की ऊर्जित विभूति, डॉ० भीमराव अम्बेडकर हम सबके प्रणाम के अधिकारी हैं।

काशी, १८-१२-'५६ —दादा धर्माधिकारी

भीषण अन्याय

समाज-व्यवस्था में सभी जगह परिवर्तन निहायत जरूरी है। उसके बिना मनुष्य जीवन में एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता। यह किसी एक देश का नहीं, बल्कि सारी दुनिया का सवाल है। जो लोग भूमि से वंचित हैं, उनकी हालत सुधारने के चतुराईपूर्ण उपाय खोजने की जरूरत नहीं, किंतु वंचित करने वालों को यह समझना चाहिए कि वे पाप कर रहे हैं।

जमीन पर व्यक्तिगत मालकियत के पाप का अंत निकट है। उसने जिस आंदोलन को जन्म दिया, वह प्रसव की आखिरी वेदना थी। अब नव-जीवन निकट है। लोगों के लंबे कष्टों का अंत होने वाला है। इस भीषण और विश्वव्यापी पाप का अंत मनुष्य-जाति के इतिहास में युगान्तरकारी होगा। —टॉलस्टॉय

भूदान-आंदोलन के बढ़ते चरण

परंधाम का पदयात्रा शिविर

विनोबाजी के परंधाम (पवनार-वर्धा) आश्रम में ता० १० दिसंबर से १४ दिसंबर तक अखिल भारतीय सामूहिक पदयात्रा-शिविर बहुत उत्साहपूर्वक एवं प्रेरणादायी रूप में संपन्न हुआ। पलनी के निर्णयों एवं चतुर्विध निष्ठा के सम्बन्ध में गम्भीर चर्चाएँ हुईं तथा भावी कार्य के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक विचार हुआ। तंत्र-मुक्ति एवं निधि-मुक्ति के सम्बन्ध में कुछ चिंतन-भेद दृष्टिगोचर हुआ, परंतु प्रत्यक्ष कार्य में ये ही चिंतक नौजवानों से अधिक उत्साही नजर आये। सर्वत्र एक नयी चेतना एवं गहरे आत्मविश्वास का दर्शन हो रहा था और विनोबा के शब्दों में एक बिजली-सी काम करते नजर आ रही थी।

करीब-करीब सभी प्रांतों से प्रमुख कार्यकर्ता आये थे। था वैसे यह शिविर, पर बन गया था एक छोटा-सा कार्यवाहक सम्मेलन ही। तंत्र-मुक्ति, निधि-मुक्ति, लोकनीति आदि पर विचार-मंथन काफी हुआ एवं स्वतंत्र चिंतनाएँ प्रकट हुईं। श्री शंकररावजी ने तंत्र-मुक्ति में से शासनमुक्ति की ओर एवं निधि-मुक्ति में से सौम्यतम सत्याग्रह की ओर जाने की राह कैसे प्रशस्त हुई है, इसका साधिकार विवेचन किया। श्री आर्यनायकमूजी ने विनोबा के मानस का परिचय देते हुए आगामी तंत्र-मुक्त महान् क्रांति की संभावनाएँ एवं स्वरूप प्रकट किया। तंत्र-मुक्ति के अनंतर आंदोलन, प्रकाशन, पदयात्रा आदि का संयोजन कैसे हो, इस पर काफी चर्चाएँ हुईं और कुछ महत्त्वपूर्ण निश्चय भी किये गये।

क्रांति की पूर्व-तैयारी एवं सन् '५७ के लिए पूर्णाहुति की भावना से ही प्रस्तुत सम्मेलन ओतप्रोत था, यह फलश्रुति के तौर पर कहा जाय, तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। कार्यकर्ताओं में नवनवोन्मेष क्षण-क्षण पर झलक रहा था। इतने बड़े पलनी के निर्णय तो जैसे उनके मन के ही निर्णय थे—जिसकी वे मानो बाट ही देख रहे थे। सन् '५७ के एक-एक क्षण-का चिंतन-मनन-कार्य भूदान-यज्ञ के लिए ही हो, ऐसी प्रतिज्ञाएँ भी अनेकों ने लीं एवं जनसागर में विलीन हो जाने वाले तंत्र की महत्ता मन में अनुभव की। हजारों गाँवों में संदेश पहुँचाना, वहाँ सेवक-वर्ग निर्माण करना, पत्र-पत्रिकाएँ एवं पुस्तकों का प्रचार अजहद तरीके से करना आदि अनेक संयोजन की बातें सोची गयीं और हर तरह से अपने को ग्राम-राज्य की स्थापना सम्बन्धी सन् '५७ की क्रांति के लिए प्रस्तुत करने की तैयारी का निश्चय किया गया।

करीब सौ-सवा सौ प्रमुख कार्यकर्ता आये थे। अपने-अपने प्रांतों के संयोजन की रूपरेखा भी उन्होंने बतायी।

शिविराध्यक्ष श्री वल्लभस्वामी थे एवं श्री आर्यनायकमूजी, श्री शंकररावजी, श्री सिद्धराजजी, श्री गोकुलभाई भट्ट, श्री लाला अचिंतरामजी, श्री करणभाई, श्री कपिलभाई, श्री बैद्यनाथ बाबू आदि आंदोलन के रथी-महारथी इकट्ठे हुए थे, जिन्होंने हर पहलू से अपने चिंतन का लाभ शिविर को दिया। श्री बंग, श्री सुरेश रामभाई प्रभृति का यह आयोजन बड़ी सफलता के साथ सम्पन्न हुआ। सामूहिक पदयात्राओं द्वारा अलख जगाने की ओर पूरा ध्यान देने का भी तय हुआ। सूतांजलि, सूत्रदान, संपत्तिदान, ग्रामदान, विचार-प्रचार आदि पर शक्ति लगाने एवं पलनी-प्रणीत त्रिविध निष्ठाओं का अनुष्ठान करने का प्रयास हर क्षण पर प्रकट हो रहा था।

वर्धा के कुछ कार्यकर्ताओं ने तो एक वर्ष तक वानप्रस्थाश्रम, मानो एक वर्ष की स्वेच्छा की कैद, जेब-खर्च, वेतन-खर्च तक न लेने की प्रतिज्ञा और कुटुम्बीजनों की व्यवस्था दूसरों के जिम्मे करने के संकल्प प्रकट किये।

—संवाददाता

बिहार में क्रांतिकारी प्रस्ताव का स्वागत

बिहार प्रांतीय समिति के सदस्यों और जिलों के संयोजकों की एक विशेष बैठक पलनी में पारित सर्व-सेवा-संघ के प्रस्ताव पर विचार करने के लिए हुई। सबने एक स्वर से उत्साह और दृढ़ता के साथ प्रस्ताव का स्वागत किया।

बिहार प्रांतीय भूदान-समिति के संयोजक श्री लक्ष्मी बाबू के आग्रह पर श्री जयप्रकाश बाबू और श्री धीरेन्द्र भाई ने प्रस्ताव पर प्रकाश डाला। श्री जयप्रकाश बाबू ने बताया कि "प्रस्ताव अचानक और अभावित रूप से नहीं आया है, बल्कि काफी समय और सोच-विचार के बाद आया है। हममें से सभी इसी नतीजे पर पहुँचे हैं कि भूदान-कार्य तंत्रमुक्त और निधिमुक्त होना चाहिए। इसीसे काम में तेजस्विता आयेगी। कथनी-करनी में सामंजस्य होगा। आज जब दुनिया

www.vinoba.in

राजनिष्ठा की तरफ बढ़ रही है, उस समय हम लोकनीति के विचार का दर्शन जनता के सामने रख रहे हैं। अतः हमारा सारा ढंग और कार्य लोकनीति के आधार और मर्यादा में होना चाहिए।" अंत में आपने बिहार में वितरण-कार्य में गति लाने के लिए विशेष जोर दिया।

श्री धीरेन्द्र भाई ने नयी परिस्थिति में कार्य कैसे किया जाय, इस संबंध में प्रकाश डाला। उन्होंने कहा : "(१) कार्यकर्ताओं को अपनी शक्ति और पहुँच तक का क्षेत्र लेना चाहिए। गाँव, थाना, ज़िले में से क्षेत्र चुनना चाहिए। (२) भरण-पोषण के लिए घर, मित्र, क्षेत्र के लोगों पर निर्भर रहना चाहिए। (३) हर प्रकार के कार्यों में जैसे परिवार में बड़े-बूढ़ों से मदद ली जाती है और देते हैं, उसी तरह अब भी मदद लेनी चाहिए। (४) कार्यकर्ताओं को कोई संघ नहीं बनाना है, लेकिन समाज बनाना है। सर्वोदय-विचार के लोग एकत्र हों, विचार-विमर्श करें और काम बढ़ाने का संकल्प लेकर चले जायँ। (५) हर सेवक को जिले के दूसरे सेवकों की जानकारी रखनी चाहिए। (६) अपने क्षेत्र में एक-दो व्यक्तियों को तैयार करना चाहिए, जो दो-ढाई सौ रुपये का साहित्य मँगा कर बिक्री के लिए दें। (७) सेवकों को अपना समाचार क्षेत्रीय-प्रकाशन मंदिरों को भेजना चाहिए। (८) यह समझना चाहिए कि क्रांति संस्था से नहीं होती, लेकिन संस्था का उपयोग क्रांति के लिए किया जाता है। अतः सेवक सर्व-सेवा-संघ, खादी-ग्रामोद्योग-संघ आदि संस्थाओं का उपयोग कर सकते हैं और मदद ले सकते हैं, लेना चाहिए। (९) क्रांति व्यक्तियों से होती है। कार्यकर्ता धीरे-धीरे जगह-जगह तैयार होंगे, तो उनकी संख्या बढ़ेगी, सबसे मदद मिलेगी।

श्री वैद्यनाथ चौधरी ने वितरण की दिक्कतों का हल समझाते हुए बताया कि अधिक से अधिक वितरण करें। कार्यकर्ताओं ने नयी मान्यता के अनुसार काम करने का संकल्प किया। नयी दिशा में तेजी से चिंतन हो रहा है।

गया, ५-१२-'५६ —रामवृक्ष शास्त्री

बिहार में 'भूदान-यज्ञ' साप्ताहिक की खपत व ग्राम-संख्या, जिसमें अंक जाते हैं : ३० नवंबर '५६ तक

जिला-नाम	ग्राहकों द्वारा	एजेंटों द्वारा	कुल अंक	ग्राम-संख्या
१. गया	१०४	१२३	२२७	६८
२. चम्पारण	१६२	८८	२५०	५६
३. दरभंगा	९००	२३९	११३९	२७३
४. पटना	१६३	८५	२४८	८४
५. पलामू	२३२	—	२३२	८०
६. पूर्णिया	६००	८५	६८५	१६९
७. भागलपुर	२२८	१०७	३३५	६९
८. मानभूम	२९	२५	५४	१९
९. मुंगेर	१६३	४६२	६२५	१०२
१०. मुजफ्फरपुर	५०३	२३४	७३७	१९७
११. राँची	१५४	१०	१६४	५१
१२. शाहाबाद	४२	८५	१२७	४०
१३. संथालपरगना	८५	३९	१२४	३२
१४. सहर्षा	१२२	८४	२०६	६३
१५. सारन	८७	९३	१८०	५१
१६. सिंहभूम	७७	२५	१०२	२१
१७. हजारीबाग	३७	४०	७७	१९
कुल	३६८८	१८२४	५५१२	१३९४

—व्यवस्थापक

गरीबों से प्रेरणा

दीपावली का शुभ दिन, मांगलिक दिन और मांगलिक प्रसंग सारा मैदान वनवासियों से लबालब भरा था। गुजरात भूदान-समिति के संयोजक श्री जुगतरामभाई दवे के हाथों गुजरात के प्रथम ग्रामदान का वितरण-समारोह था। दवेजी तिलक लगा कर अधिकारपत्र देते जा रहे थे। वनवासी इन्हें सूत की मालाएँ पहना रहे थे। बात की बात में ४९० बीघा जमीन का वितरण पूर्ण हुआ।

१७ किसान कुटुम्बों को और ३ नायक कुटुम्बों को—जो सबसे गरीब कौम हैं—अच्छी से अच्छी जमीन गाँव के लोगों ने दी। गजलाबाँट गाँव के लोगों ने यह भी जाहिर किया कि एक साल तक हम सब मिल कर इन तीन नायक भाइयों की जमीन उठा देंगे, दूसरे गाँववालों ने भी बैल, बीज, हल देने का संकल्प किया। भूमिहीनों ने श्रमदान भी दिया। ६२ बीघा नयी जमीन भी मिली। गरीबों की गीता गायी जा रही थी : प्रेम से पत्थर भी पिघलना, करुणा की रही कहानी क्या ?

—हरिवल्लभ परीख

संवाद-सूचनाएँ :

सरंजाम-सम्मेलन

सरंजाम-सम्मेलन दिसम्बर '५६ के तीसरे सप्ताह में लेने का सोचा गया था, किन्तु सुविधा की दृष्टि से १२-१३ जनवरी '५७ को हरिजन-आश्रम अहमदाबाद में लेना तय हुआ है।

यदि किन्हीं भाइयों को अंबर-सरंजाम में कोई सुधार सुझाने हों, तो उसे प्रदर्शित कर सकने वाले कार्यकर्ताओं के साथ वे सुधार जाँच के लिए ५ जनवरी '५७ तक हरिजन-आश्रम, साबरमती पहुँचा देवें। मंजूर-शुदा सुधारों को सर्व-सेवा-संघ की ओर से उचित पुरस्कार दिया जावेगा। सुधरे हुए और पास किये गये नमूने सर्व-सेवा-संघ खरीद लेगा।

सरंजाम-सम्मेलन का कार्यक्रम

ता० ५ से १० जनवरी—अन्यान्य-सुधारों की जाँच।
ता० ११ जनवरी—परीक्षा-समिति की सभा।
ता० १२ व १३ जनवरी—सरंजाम-निर्णायक समिति की सभा।
ता० १४-१५ जनवरी—खादी-ग्रामोद्योग-समिति की सभा।

सम्मेलन में शामिल होने के लिए आने वालों का अहमदाबाद में रहने-खाने का प्रबंध संघ की ओर से होगा। सफर आदि अन्य खर्च व्यक्तियों को या संस्थाओं को व्यक्तिशः उठाना होगा।

—ना० रा० सोवनी,
अ. भा. सर्व-सेवा-संघ, वर्धा संयोजक, खादी-ग्रामोद्योग-समिति

नये प्रकाशन : **भूदान-गंगा** (दो खंडों में)

विनोबाजी की भूदान-पद-यात्रा १८ अप्रैल, १९५१ को पोचमपल्ली (तेलंगाना) से शुरू हुई और भूदान की यह गंगा उत्तर-प्रदेश, बिहार, बंगाल, उत्कल, आंध्र आदि में होती हुई अब तमिलनाड की ओर अखंड रूप से बढ़ रही है।

विनोबाजी अपनी यात्रा में रोज गाँव-समाज के सामने देश की विविध समस्याओं पर अपना चिंतन प्रकट करते रहते हैं। उनके प्रवचनों का संपादन कुमारी निर्मला देशपांडे ने उन्हीं के मार्ग-दर्शन में किया है और १८ अप्रैल, '५१ से ३० जनवरी, '५६ तक के प्रवचन तीन खंडों में प्रकाशित हो रहे हैं। उनमें से पहला खंड उत्तर-प्रदेश तक का और दूसरा बिहार का है। दोनों छप कर तैयार हो गये हैं।

देश की समस्याओं को, देश की सांस्कृतिक एकता, महत्ता और आत्मा को मौलिक रूप में समझने के लिए ये पुस्तकें स्थायी महत्त्व रखती हैं।

मूल्य : प्रत्येक खंड का डेढ़ रुपया

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन, राजघाट, काशी

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१.	विश्वशांति का साधन : भूदान	विनोबा	१
२.	युग का नया सबेरा (गीत)	रामगोपाल दीक्षित	२
३.	क्रांति की अनोखी प्रक्रिया	दादा धर्माधिकारी	३
४.	कार्यकर्ताओं को सनद और चेतावनी	दामोदरदास मूँदड़ा	३
५.	ॐ नमो नारायण पुरुषोत्तमाय	काका कालेलकर	४
६.	चोकर मनुष्य की खुराक है, पशुओं की नहीं	जो० कॉ० कुमारप्पा	५
७.	सरकार पर वजन क्यों न डालें ?	विनोबा	६
८.	कम्यूनिस्ट मित्रों से निवेदन : २.	जयप्रकाश नारायण	६
९.	अहिंसा के लिए त्रिविध निष्ठा आवश्यक : २.	विनोबा	७
१०.	सुनहला खतरा	प्रबोध चोकसी	८
११.	तमिलनाड की क्रांति-यात्रा से	मीरा व्यास	९
१२.	ग्रामराज की एक झाँकी	राममूर्ति	१०
१३.	कोरापुट : नियोजन की ओर	—	१०
१४.	डॉ० अम्बेडकर को श्रद्धांजलि !	विनोबा : दादा धर्माधिकारी	११
१५.	भूदान-आंदोलन के बढ़ते चरण	—	१२

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव-भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : पोस्ट बॉक्स नं० ४१, राजघाट, काशी।

www.vinoba.in